हीरे रा हिकमत

नारायणलाल परमार

○ नारायण लाल परमार

जगतराम एण्ड सन्ज़
गांधी नगर, दिल्ली-110031

© प्रकाशक

जगतराम एण्ड सन्स
IX/221, मेन रोड, गांधी नगर, दिल्ली-110031

प्रथम संस्करण
1986

मूल्य
छ: रुपये

मुद्रक
चोपड़ा प्रिंटर्स, मोहन पार्क,
नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

HARIYE NA HIMMAT (Hindi)
by Narayan Lal Parmar Price : 6.00

रतन ठाकुर गांव के चौधरी थे। उनका स्वभाव बड़ा मीठा था। न केवल माधोपुर गांव के बल्कि आसपास के तमामलोग उन्हें चाहते थे। यदि किसी के घर कोई दुख आ पड़ता तो चौधरी बिना बुलाये चले जाते और उसकी मदद करते।

काफी जमीन और बाग-बगीचों के मालिक होकर भी उन्हें घमण्ड नहीं था। वे आलसी भी नहीं थे। अपने खेतों में मजदूरों के साथ वे स्वयं काम करते थे। काम करने वालों का हौसला बढ़ाते थे। उनके लिए ऊंच-नीच सब बराबर थे।

लालू नाम का उनका एक लड़का था। गांव के पंडितजी उसे पढ़ाते थे। पढ़ने-लिखने में लालू बहुत होशियार था। पढ़ने के बाद फ़ुरसत के समय उसके पिता उसे काम करने की सलाह दिया करते थे। परंतु लालू पढ़ने-लिखने में ही अधिक लगा रहता था। एकमात्र पुत्र होने के कारण उसके पिता का उस पर अटूट प्रेम था।

अचानक ही एक दिन चौधरी को बुखार हो आया। उसके पहले उन्हें कभी-कभी पेट में दर्द होने की शिकायत थी। परंतु इस बार उनकी हालत गंभीर हो गई। एक-से-एक बढ़कर वैद्य और हकीम आये। सबने अपने-अपने ढंग से उनका इलाज किया। लेकिन बात बिगड़ती ही गई। चौधरी को भी विश्वास हो गया कि अब उनका अन्तिम समय आ पहुंचा है।

उसी दिन शाम को चौधरी ने लालू को अपने पास बुलाया और कहा—"देखो बेटे, अब मैं बचूंगा नहीं। मैंने अपनी जिंदगी

में, अपनी समझ से जो भी अच्छे काम हो सकते हैं, किये हैं। ये घर-द्वार, बाग-बगीचे सब मेरी मेहनत के ही फल हैं। मैंने ईमानदार रहकर ही यह सब कुछ किया है। मैं चाहता हूं कि

तुम भी मेरी ही तरह शान से अपनी जिन्दगी बिताओ। गलत काम भूलकर भी न करना। जितना हो सके, दूसरों की भलाई ही करना। अच्छे काम करने से ईश्वर खुश होते हैं। मेहनत से

कभी जी मन चुराना। मैं जानता हूं कि तुम अकेले हो। दुनियादारी के मामले में नासमझ हो, फिर भी कहना चाहूंगा कि सद्गुणों से बढ़कर आदमी का और कोई साथी नहीं होता। अगर तुम बुराइयों को पहचान कर उससे दूर रहे तो सचमुच तुम्हें अपने जीवन में सफलता मिलेगी। मैं तुम्हें आशीर्वाद देता हूं कि तुम्हें किसी को सलाम न करना पड़े और तुम मजे से शहद-रोटी खाकर अपनी जिंदगी गुजारो।" इतना कहकर चौधरी चुप हो गये। लालू की आंखों में आंसुओं की बाढ़ आ गई। तभी एक हिचकी आई और चौधरी चल बसे।

कहावत है कि जहां गुड़ होता है वहां चींटे आपसे-आप आ धमकते हैं। चौधरी की मृत्यु के बाद कुछ रिश्तेदार आये जरूर, परंतु कुछ दिन रहकर अपना मतलब साधकर चले गये। कहने को घर में नौकर-चाकर थे। गांव के हितैषी लोग थे। किन्तु इस दुनिया में हमेशा कौन किसी का साथ देता है! लालू अकेला हो गया। उसे बार-बार अपने पिता की अंतिम नसीहत याद आती। मरते वक्त उसके पिता ने कहा था कि किसी को सलाम न करना और शहद-रोटी खाकर जिन्दगी मजे से गुजारना। इस नसीहत को याद करके लालू मन-ही-मन खुश हो जाता। उसके यार-दोस्त भी कम न थे। चौधरी की मृत्यु के बाद तो उसके कुछ मित्र उसके साथ परछाईं की तरह लगे रहते थे।

लालू धीरे-धीरे अपने पिता की मृत्यु का दुख भूलने लगा था। उसके पिता ने उससे किसी को सलाम न करने की बात कही थी।।अतएव वह दिन-भर घर में ही पड़ा रहता। नौकर-चाकर ही खेती-बाड़ी का काम देखते। लालू पिता की आज्ञानुसार अब शहद-रोटी ही खाता। उसे किसी बात की कोई कमी नहीं थी। उसके पिता उसके लिए काफी संपत्ति छोड़ गये थे।

लालू की दिनचर्या अब कछ इस तरह की हो चली थी कि

दिन-भर अपने घर में मित्रों के साथ गप्पें हांकना, चौपड़ खेलना या फिर लम्बी तानकर सो रहना। खेती-बारी का काम करने वाले अधिकांश नौकर पुराने और ईमानदार थे। अतएव उनको लालू की किसी मामले में सलाह की जरूरत ही नहीं थी। बाकायदा सब काम चल रहा था। लालू अपने-आप में मस्त था।

लेकिन सब दिन एक समान कहां होते हैं ! समय को बदलते भला देर क्या लगती है ! लालू के भी दिन बदले। दोस्तों की अनाप-शनाप इच्छाओं के कारण उसका खर्च बढ़ता ही गया। उसके दिन-भर घर में पड़े रहने के कारण खेती-बारी का काम भी ढीला पड़ता गया।

गांव के बड़े-बूढ़ों ने उसे कई बार समझाने की कोशिश भी की लेकिन लालू अब किसी की भी बात सुनने को तैयार न था। कभी-कभी तो समझाने वालों पर ही वह बुरी तरह से नाराज हो जाता था।

गांव के पंडित जी से आखिर न रहा गया। वे लालू के पिता के अच्छे मित्रों में थे। उन्होंने उसे पढ़ाया भी था। एक दिन जब लालू घर में अकेला था, पंडित जी उसके पास जा पहुंचे और कहा—"बेटा लालू, तुम जिस रास्ते पर चल रहे हो वह तुम्हारे पिता जी के द्वारा बताया गया रास्ता कदापि नहीं है। तुम मेरे बेटे के समान हो। मैं तुम्हें गलत रास्ते पर चलते हुए नहीं देख सकता। इसीलिए आज मैं तुमसे कहने आया हूं कि अभी भी समय है, सम्हल जाओगे तो भविष्य में सुखी रहोगे।

"वर्ना ऐसी भी स्थिति आ सकती है कि तुम दाने-दाने को मोहताज हो जाओ। जमाना बहुत बुरा है। ये यार-दोस्त केवल अच्छे दिनों के ही साथी होते हैं। मुसीबत पड़ने पर कोई पीछे मुड़कर भी नहीं देखता। तुम्हारी खेती-बारी भी अब पहले जैसी नहीं रही। फसल में लगातार गिरावट आ रही है। आखिर यह

सब कितने दिनों तक चलेगा ? मैं चाहता हूं कि तुम अपना यह रवैया बदल डालो और अच्छे आदमी की तरह रहो, जिससे कि तुम्हारे पिता की आत्मा को शांति मिले।"

लालू को पंडित जी का यह उपदेश अच्छा नहीं लगा। उसमें इतना नैतिक साहस तो नहीं था कि वह पंडित जी के सामने ही उनका विरोध करे, परंतु उस समय उसने पंडित जी को कोई जवाब नहीं दिया। हंसकर टाल गया।

पंडित जी फर्ज निभाने आये थे। अपमानित होकर लौट गये। लालू की गाड़ी पहले की तरह ही अपनी बेढंगी रफ्तार से चलती रही। यार-दोस्तों के कारण अब वह कई तरह के व्यसनों का आदी हो चुका था। पहले तो उसके दोस्तों ने उससे कर्ज के रूप में पैसे मांगे। लालू उन्हें अपने पिता की गाढ़ी कमाई खुले हाथों लुटाता रहा। आखिर यह कब तक चलता? बड़े-बड़े जलाशय तक सूख जाते हैं। लालू की संपत्ति की आखिर बिसात ही क्या थी ? सारा नकद पैसा समाप्त हो गया। अब बारी थी बाग-बगीचों के बिकने की, धीरे-धीरे वे सब भी बिक गये। लालू को जुए का कुछ ऐसा चस्का लगा कि खेत भी जल्दी महाजनों के नाम चढ़ गये। रह गया मकान, तो वह भी आखिर कितने दिनों तक रहता ? इस बीच पंडित जी एक बार फिर आये और उन्होंने लालू को प्यार से समझाया। लेकिन लालू पर कोई असर नहीं हुआ। गांव की तमाम बुरी शक्तियां एक जुट होकर उसके पीछे लगी हुई थीं। पंडित जी या उनके जैसे दो-चार भले आदमियों की बात को भला कौन सुनता, आखिर वही हुआ जिसकी कल्पना थी। लालू का मकान भी बिक गया।

कल तक जो एक शानदार घर-द्वार का मालिक था आज वह भिखारी हो गया। जिस दोस्त ने उसका मकान खरीदा था उसने उसे उसी दिन घर से बाहर निकाल दिया।

लालू जैसे आसमान से गिरा। अब उसको होश आया। थोड़ी देर के लिए तो उसे कुछ समझ ही नहीं आया कि आखिर बात क्या हो गई लेकिन सचाई सामने थी और वह चौराहे पर खड़ा था। अब उसका कोई घर नहीं था। कोई दोस्त नहीं था। उसकी आंखों में अंधेरा छा गया। कल तक बीसियों दोस्त उसे घेरे रहते थे, आज किसी का दूर-दूर तक पता नहीं था। पहली बार लालू को यह जानकारी हुई कि जिन्दगी का एक और पहलू भी होता है जिसकी कड़वाहट का पता उसे आज तक नहीं था।

रात हो चुकी थी। अंधेरा चारों तरफ फैला हुआ था। इस बीच लालू की भेंट कई लोगों से हुई थी लेकिन किसी ने उसके प्रति कोई सहानुभूति प्रकट नहीं की। लालू उदास हो गया। एक बार तो मन में आया कि आत्महत्या कर ले, परंतु न जाने क्यों वह ऐसा न कर सका।

थका-हारा लालू इमली के पेड़ के तने से टिककर बैठ गया। उसका दिल थक चुका था। दिमाग काम नहीं कर रहा था। भूख भी लग आई थी। लेकिन अब क्या हो। उसे कई नाम याद आते रहे। जिनके घर वह जा सकता था। किंतु यह कल्पना ही भीतर-भीतर उसे अपमानजनक लग रही थी।

रात का प्रथम पहर बीतने को था कि उसके कानों में प्यार-भरी एक आवाज टकराई। यह पंडित जी थे। लालू की बरबादी का हाल उन्हें मालूम हो चुका था। तब से ही वे उसे ढूंढ़ रहे थे। लालू को उन्होंने सहारा देकर उठाया। उसकी इच्छा जाने बगैर ही वे उसे अपने घर ले आये।

लालू पंडित जी के घर पहुंच गया परंतु उसे कुछ अच्छा नहीं लग रहा था। उसका मन स्वयं को अपराधी महसूस कर रहा था। काश कि पंडित जी की बात वह मान जाता तो आज यह

दिन न देखना पड़ता। लेकिन अब चिड़िया खेत चुग गई थी। पछताने से फायदा ही क्या ?

उस रात पंडित जी के बार-बार आग्रह करने पर काल भोजन के नाम पर मुश्किल से ही दो-चार कौर खा सका। पंडित जी ने उसके लिए बिस्तर बिछा दिया। सोच लिया कि अब सुबह ही बात करेंगे। वे जाकर सो रहे।

लालू बिस्तर पर पड़ तो गया, पर उसे नींद नहीं आई। कई बार लगता कि उठकर कहीं भाग जाए। ऐसी गिरी हुई जिन्दगी से तो मर जाना बेहतर है। रह-रहकर उसे अपने पिताजी की अंतिम बार कही गई नसीहतें याद आतीं। वह सोचने लगा कि बरबादी की ओर ले जाने वाली ऐसी नसीहतें आखिर उसके पिता ने उसे क्यों दीं ? उसके पिता तो उसे बहुत चाहते थे। कहीं ऐसा तो नहीं कि उससे ही इन नसीहतों को समझने में भूल हो गई हो।

रात-भर लालू सो नहीं सका। उसके दिमाग में विचारों के बवण्डर उठते रहे। थकान से उसका शरीर टूट रहा था। कभी वह बिस्तर से उठकर बैठ जाता तो कभी उठकर टहलने लगता, लेकिन बेचैनी कुछ ऐसी थी कि हटने का नाम ही नहीं ले रही थी।

काली रात बड़ी भयावह हो उठी थी। सन्नाटा पूरी जवानी पर था। सारी दुनिया आराम से सो रही थी। एक लालू ही ऐसा अभागा था कि नींद जिससे कोसों दूर थी। तरह-तरह के प्रश्न उसका पीछा कर रहे थे लेकिन उनमें से किसी एक का भी सामना करने की हिम्मत लालू में नहीं थी।

सुबह हुई। पंडित जी उठे। लालू की लाल-लाल आंखें देख-कर समझ गये, वह रात-भर नहीं सोया है। फिर भी नहला-धुला-कर उसे कलेवा कराया। फिर प्रेम से अपने पास बिठाकर कहा—

"अब दुखी होने से कोई फायदा नहीं है। जो बात बीत गई उसे मन से बिसार दो और भविष्य की बातें सोचो। तुम जब तक चाहो मेरे घर में रह सकते हो। अपनी सामर्थ्य के अनुसार जो करना चाहो, करो। मुझसे जो मदद बन पड़ेगी, मैं जरूर करूंगा।"

"लेकिन पंडित काका, मैं अब तक यह नहीं समझ पाया कि मरते समय मेरे पिता ने मुझे ऐसी नसीहत क्यों दी कि मैं किसी को सलाम न करूं अर्थात् घर में पड़ा रहूं और मजे से शहद-रोटी खाता रहूं। यदि वे इस तरह की नसीहत मुझे न देते तो हो सकता है काम करने में मेरा मन लगा रहता और आज मेरी जो बरबादी हुई है वह न होती।"

पंडित जी ने मुस्कराकर कहा—"नहीं बेटे, तुम गलत समझ रहे हो। तुम्हारे पिता ने तुम्हें नसीहतें तो ठीक-ठाक ही दी थीं। तुमने उसका अर्थ ही गलत लगाया है।"

"वह कैसे ?"

"दरअसल किसी को सलाम न करने से तुम्हारे पिता का मतलब यह था कि तुम सुबह जल्दी ही अपने खेत पर चले जाओ क्योंकि उस समय तो प्रायः लोग अपने घरों में सोये रहते हैं। तब किसी को सलाम करने का प्रश्न ही कहां उठता है। तुम्हें खेत पर जल्दी पहुंचते देखकर नौकर भी जल्दी पहुंचेंगे और काम भी खूब होगा। अब रही शहद-रोटी खाने की बात, तो इसका सीधा-सा मतलब है कि दिन-भर खेत में मेहनत करने के बाद शाम को जब तुम घर वापस आओगे तो सूखी रोटी भी तुम्हें शहद की तरह ही मीठी लगेगी, इस प्रकार नींद भी खूब आएगी। तन्दुरुस्ती भी ठीक रहेगी और जिन्दगी मजे से गुजरेगी।"

सुनकर लालू का सिर चकराने लगा। काश, कि यह भेद उसे पहले ही मालूम हो जाता! बनी-बनाई बात बिगड़ गई। अब

कुछ नहीं हो सकता। जाने क्या हुआ कि एकाएक लालू भाग खड़ा हुआ। वह चीखता जा रहा था। अब····· कुछ····· नहीं हो····· सकता। कुछ······भी······न······हीं।

० ० ०

दो-चार दिनों तक माधोपुर गांव में लालू को लेकर खूब चर्चाएं होती रहीं। विश्वास यही किया जाने लगा कि लालू पागल हो गया है। हंसता ही रहता है। बच्चों के साथ खेलने में उसे मजा आता है। किसी ने खाना दिया तो खा लिया वर्ना चुप्पी साध ली। किसी से कोई शिकायत नहीं।

गांव की गुड़ी में लालू पड़ा रहता। सनक चढ़ती तो किसी के खेत में काम करने के लिए जा पहुंचता। कुएं पर मां-बहनें पानी भर रही होतीं तो वहां भी लालू बेधड़क पहुंच जाता। उनके हाथों से बाल्टी-डोर छीनकर खुद पानी खींचने लग जाता। लालू के लिए अब मान-अपमान जैसी कोई चीज ही नहीं थी। कोई जान-बूझकर उससे काम लेना चाहता तो वह इनकार कर देता। बस, इसी तरह लालू की जिन्दगी चल रही थी।

पंडित जी यह सब देख रहे थे। मगर क्या कर सकते थे! बात उनके बस की नहीं थी। लालू की हालत जैसी भी हो, वह खुश लगता था उसका अपना एक संसार था। यद्यपि वह सबका मित्र था पर सलाम आज भी वह किसी को नहीं करता था। कभी-कभी तो बड़ों-बूढ़ों से भी वह बहस कर बैठता था। इस प्रकार माधोपुर गांव में ही नहीं आसपास के इलाके-भर के लिए उसका चरित्र एक विदूषक की तरह हो गया था।

"आगे नाथ न पीछे पगहा" लालू पर यह कहावत अक्षरशः चरितार्थ होती थी। इधर वह गजब का हंसोड़ हो गया था। कभी किसी ने उसे उदास नहीं देखा। ऐसा भी नहीं था कि वह कभी ढंग से मजदूरी करता था। काम करना उसके बस का न था। अब

उसके सामने जो भी पड़ जाता आनन-फानन वह उसका मजाक उड़ा देता। देखने वाले हंसते-हंसते लोटपोट हो जाते। बच्चों के लिए वह किसी जोकर से कम मनोरंजक नहीं था। जहां कहीं भी बच्चे उसे देखते, घेर लेते। फिर घंटों गप्पें चलतीं। किशोरों के बीच उसकी पूछ तब होती जब कोई समस्या आन पड़ती, लालू कोई न कोई हल ढूंढ़ निकालता। चाहे उसे अपनी जान ही जोखिम में क्यों न डालनी पड़े। बड़े-बूढ़े प्रायः उससे कतराते। क्या पता वह कब किसकी पगड़ी उछाल दे।

अब पेट पालने का उसने एक अजीब तरीका निकाल लिया था। मुहल्ले में औरतें मिलकर अक्सर धान कूटतीं। लालू आवाज सुनकर वहां पहुंच जाता। और ढेकी की ढक-ढक की आवाज को मुंह से दुहराता। इससे धान कूटने वाली औरतों का मनोरंजन होता। नई बहुएं तो शरम के मारे लाल-लाल हो जातीं। पर लालू अपने काम से कभी विरत न होता। अंत में जब चावल साफ हो जाता तो लालू अपनी धोती का छोर फैलाकर उनमें से किसी सयानी महिला से कहता—"देखो काकी, मैंने भी तुम लोगों के साथ काम किया है। मेहनत की है। तुम सबका हौसला बढ़ाया है। इसलिए मजदूरी में मेरा भी हिस्सा होता है। लाओ, मेरा हिस्सा मुझे दे दो।" सयानी महिलाएं उसे डांटतीं, झिड़कतीं। लेकिन अंत में थोड़े-से चावल दे देतीं। उस दिन लाल बड़ी शान से अपना चूल्हा सुलगाता।

गुड़ी के पास ही मनभा अहीरन रहती थी। प्रायः वह आस-पास के गांवों में कभी दूध और दही बेचने जाया करती। लालू समय देखकर उसके पीछे हो लेता। अहीरन आवाज देती "दूध ले लो दूध"। लालू उसकी आवाज को जोर-शोर से दुहराता जाता। कभी-कभी अपनी ओर से दूध-दही के गुणों का बखान करता। अहीरन उसे मना करती। पर लालू कहां मानने वाला

शुद्ध
दही

था। लौटते वक्त वह अहीरन से कहता—"देख भौजी, मैंने तेरा दूध-दही आनन-फानन बिकवाया है। अब मेहरबानी करके मेरी मजदूरी दे दे।" बेचारी अहीरन क्या करती। इच्छा न होने पर भी लालू से पिंड छुड़ाने के लिए उसे कुछ-न-कुछ देना ही पड़ता। उसके बाद लालू की अकड़ देखते ही बनती।

बच्चे मिलकर कभी होरा भूनते। लालू उन्हें नये-नये तरीके बताता। बच्चे तो मानो उस पर लट्टू हो गये थे। बार-बार ठगे जाने के बाद भी लालू की बातचीत का ढंग कुछ ऐसा जादुई होता था कि बच्चे तो क्या बड़े-बूढ़े तक अक्सर उसके झांसे में आ जाया करते थे। बेचारे लालू का होरा भूनना देखते ही रह जाते और होरे चल देते लालू के पेट में।

इस प्रकार लालू का कार्य-व्यापार चलता ही रहता। कई बार उसे गालियां भी मिलतीं। लोग बुरी तरह से उसे झिड़क देते परंतु लालू किसी को तब भी बुरी निगाह से नहीं देखता था।

खेतों में जब काम चलता तो लालू किसी को ददरिया-गीत सुनाकर तो किसी को हंसा-हंसाकर मजदूरी खड़ी कर लेता। कभी वह किसी हलवाहे से कहता कि लाओ तुम्हारी चिलम सुलगा दूं। और तब दूर जाकर लालू स्वयं ही चिलम का आनंद लेने लग जाता। लोगों को उस पर गुस्सा भी आता था और प्यार भी। वक्त बीतता जा रहा था।

उस वर्ष खूब गर्मी पड़ी। वैसे ही गांव में कुएं कम थे। पानी काफी दूर फैली नदी से लाना पड़ता था। मुखिया के मन में जाने क्या बात आई कि वह गांव में एक नया कुआं बनवाने के लिए तैयार हो गया। गांव की जमीन पथरीली थी, इसी से एक बड़े खर्च का अनुमान था। मुश्किल से कोटेना गांव का झगरू केवट उसका ठेका लेने को तैयार हुआ।

कुएं की खुदाई शुरू हुई। लालू के लिए यह काम किसी तमाशे से कम न था। सात हाथ की गहराई के बाद ही कुएं में चट्टान निकल आई। बेचारा झगरू अपने साथियों सहित दिन-दिन-भर घन चलाकर चट्टान को तोड़ता रहता। लालू ऊपर बैठा-बैठा आवाजें देता रहता। उनका उत्साह बढ़ाता। झगरू और उसके साथी, लालू से परिचित थे। इसलिए उसकी बात का बुरा न मानते। चूंकि मामला ठेके का था अतएव प्रतिदिन मजदूरी मिलने का प्रश्न ही नहीं उठता था। लालू भी हिम्मत हारने वाला नहीं था। लगभग एक पखवाड़े की मेहनत के बाद कुआं तैयार हुआ। झगरू ने मुखिया से पैसे लिए और अपने साथियों में बांटने लगा। लालू भी उपस्थित था। उसने झट मजदूरी में से अपना हिस्सा मांगा। झगरू ने पहले तो मजाक समझकर इस ओर ध्यान ही नहीं दिया परंतु लालू की जिद देखकर उसे गुस्सा आ गया। लेकिन लालू किसी भी तरह अपना हिस्सा छोड़ने को तैयार नहीं था। बात बढ़ गई। होते-होते हाथापाई तक की नौबत आ गई। लालू अड़ा सो अड़ा ही रहा। आखिर मामला गांव की पंचायत में ले जाना पड़ा। लालू इसके लिए भी तैयार था। वह किसी पंचायत की धमकी से डरने वाला नहीं था।

नियत दिन पंचायत की बैठक हुई। बात दूर-दूर तक फैल चुकी थी। अतएव फैसला सुनने के लिये काफी लोग आ जुटे थे। लालू पहले से ही उपस्थित था। झगरू और उसके साथियों के आते ही पंचायत का काम शुरू हो गया। मुखिया और उसके साथी लालू को अच्छी तरह जानते थे। सच पूछो तो वे लोग भी लालू की आदत से तंग आ चुके थे। चाहते थे कि आज लालू को कुछ ऐसा सबक सिखाया जाए कि भविष्य में वह किसी को तंग न करे। यही कारण था कि आज वे सब इस मामले में

काफी रुचि ले रहे थे।

मामला शुरू हुआ। पहले दोनों पक्षों की ओर से सफाई ली गई। उसके बाद मुखिया ने लालू से पूछा—"लालू, तुम जो केवल आवाजें ही लगाते रहे और उसे ही काम समझकर मजदूरी मांग रहे हो, क्या यह वाजिब है ?"

"हां," लालू ने जवाब दिया।

"क्या सिर्फ आवाज लगा देने से कोई काम हो जाता है ?"

"अच्छी तरह से हो जाता है।"

"ठीक है, तुम जो कह रहे हो उसी के मुताबिक आज तुम्हारा न्याय होगा।"

यह कहकर मुखिया ने झगरू केवट से मजदूरी में मिले रुपये मांग लिए। झगरू ने कुएं का ठेका कुल डेढ़ सौ रुपयों में लिया था। पचास रुपये वह अग्रिम ले चुका था। शेष एक सौ रुपये नकद, जिसमें लालू हिस्सा मांग रहा था, झगरू ने मुखिया के सामने रख दिये।

मुखिया ने एक पत्थर मंगवाया। फिर लालू से कहा—"इधर आकर मेरे पास बैठो।" लालू पास आकर बैठ गया। मुखिया एक-एक रुपया पत्थर पर बजाता रहा। बीच-बीच में वह लालू से पूछ लिया करता था कि रुपयों की आवाज उसे सुनाई पड़ रही है या नहीं ? लालू के हां कहने पर मुखिया फिर से रुपया बजाने लगता था।

जब सौ रुपये बारी-बारी से बजाये जा चुके तब मुखिया ने लालू से कहा कि "आवाज एक बहुत बड़ी चीज होती है, तो आज मेरा यह फैसला है कि झगरू के कुआं खोदते समय तुमने भी सिर्फ आवाज ही सुनाई थी। काम झगरू और उसके साथियों ने किया था। इधर तुमने रुपयों की आवाज सुन ली। यही तुम्हारी मजदूरी है और अब मैं यह रुपये झगरू को देता हूं। बोलो, तुम्हें

कुछ कहना है ?"

सुनकर लालू एकदम चुप हो गया। मानो उसे काठ मार गया हो। दूसरा समय होता तो वह लड़ पड़ता या फिर बात को हंसी में टाल जाता। लेकिन आज तो इस फैसले ने मानो उसे भीतर से कहीं झिंझोड़कर रख दिया था। उसका चेहरा करुणा से भर आया। लगा कि उसे अपने-आप से ही घृणा हो आई है। वह चुपचाप उठा और चल पड़ा।

लोग उसका अट्टहास सुनना चाहते थे। मगर आज लालू भयानक रूप से चुप था। एकदम पत्थर की तरह चुप। उसने किसी से एक शब्द भी नहीं कहा। उसके शरीर की तमाम हरकतें जैसे खामोश हो चुकी थीं। उसके चरित्र में अचानक आये इस परिवर्तन पर लोग चकित थे।

रात हो गई। आज वह सोने के लिए गुड़ी में नहीं गया। कुछ देर तालाब के किनारे बैठा रहा। फिर धीरे-धीरे उसके कदम उसी इमली के पेड़ की ओर बढ़ चले जहां पहली बार घर से निकलकर उसने आसरा लिया था।

पंडित जी ने खबर सुनी तो दुखी हुए। लालू को उस इमली के पेड़ के तले से अपने घर ले आये। उसे दुलारा-पुचकारा और कहा—"बेटा लालू, अब इस गांव में रहकर तुम्हारा जीवन-निर्वाह कठिन है। तुम्हारी हालत देख-देखकर तो मेरा हृदय रो उठता है। मेरी इच्छा है कि तुम कहीं और चलकर रहो। मेरे दूर के रिश्ते का एक भाई रतनपुर में रहता है। गांव में उसकी छोटी-सी परचून की एक दुकान भी है। अक्सर उसे बाहर आना-जाना पड़ता है। उसे एक कर्मचारी की जरूरत है। कहो तो मैं तुम्हें कल रतनपुर पहुंचा आऊं।"

लगता था कि लालू किसी और लोक में विचरण कर रहा है। न किसी की बात सुनता है और न किसी की बात का कोई

जवाब ही देता है। फिर भी पंडित जी ने मन-ही-मन तय कर लिया कि सुबह होते ही वे लालू को साथ लेकर रतनपुर चल देंगे।

o o o o

दिन ढलते-ढलते पंडित जी लालू को लेकर रतनपुर जा पहुंचे। वातावरण में अभी भी उमस थी। घर से वे कलेवा करके चले थे। परंतु अब दोनों को जमकर भूख लग आई थी। लालू को थकावट ज्यादा महसूस हो रही थी। उसका दिमाग अब स्थिर हो चुका था।

पंडित जी के भाई का नाम फूलचंद था। उसकी उम्र यही कोई पचीस वर्ष की रही होगी। गेहुआं रंग। औसत ऊंचाई। सिर पर बहुत छोटे बाल। देह पर कुरते की जगह कुरती और घुटने तक की धोती। किसी तरह का कोई व्यसन नहीं। पंडित जी ने लालू का उससे परिचय करा दिया।

फूलचंद ने कोई खास खुशी जाहिर नहीं की। परंतु जब सुना कि लालू अनाथ है। काम करने को उत्सुक है। उसे पेट भर भोजन और तन ढकने के लिए कपड़ों के सिवा और कुछ नहीं चाहिए तो फूलचंद को अच्छा लगा। क्योंकि वह एक नम्बर का कंजूस था। देखने में तो ऐसा लगता था कि उस जैसा सादगी का अवतार और कोई दूसरा हो ही नहीं सकता। परंतु प्रायः सभी लोग यह अच्छी तरह जानते थे कि फूलचंद किस मिट्टी का बना है। यह सिर्फ लेना ही लेना जानता है, देने के नाम पर उसे जूड़ी ताप आ जाता है। मांगने पर तो वह अपने पाप भी किसी को नहीं देता।

बात तय हो गई। पंडित जी के मन पर जो एक बोझ था वह उतर गया। दूसरे दिन सुबह होते ही वे लालू को रतनपुर में छोड़कर माधोपुर लौट आये। लालू ने लौट चलने का कोई आग्रह नहीं किया।

फूलचंद की दुकान यद्यपि छोटी थी, परंतु चलती खूब थी। गांव की वह इकलौती दूकान थी। दो-चार दिन में ही लालू सारा कारोबार समझ गया। फूलचंद उसके काम से खुश था।

जल्दी ही दूकान में आने वाले ग्राहक लालू से परिचित हो गये। लालू का व्यवहार छोटे-बड़े सभी को अच्छा लगता। लालू वही काम करता, जिससे ग्राहक खुश हो। फूलचंद के साथ यह बात नहीं थी। वह ग्राहकों को तंग करता था। अच्छे के नाम पर सड़ा हुआ माल बेच देता था। ज्यादा पैसे लेकर कम तौलता था। लालू के आने से जैसे एक क्रांति हो गई।

लालू को यह जानकारी भी मिली कि फूलचंद के पिता श्री "चमड़ी जाय पर दमड़ी न जाय" सम्प्रदाय के मानने वाले थे। परंतु फूलचंद ने भी इस परम्परा का खूब फायदा उठाया। उसकी मां उसका विवाह शीघ्र ही कर देना चाहती थी। लेकिन खर्च के डर से फूलचंद अपने विवाह को काफी दिनों तक टालता रहा। आखिर उसकी मां जब बीमार पड़ी और लगा कि अब वह कुछ ही दिनों की मेहमान है तब जाकर फूलचंद विवाह के लिए तैयार हुआ। शादी हुई और मां चल बसी। लोगों ने लाख कहा कि मां के क्रिया-कर्म कुछ ढंग से करो परंतु फूलचंद ने दोनों कान मूंदकर ही काम किया।

लोग तो हंसकर यह भी बताते रहे कि ससुराल वालों ने जब कई बार दबाव डाला तब जाकर फूलचंद गौने के लिए राजी हुआ। जबकि बहू सुंदर थी। नाम था सुगंधी बाई। लेकिन फूलचंद के लिए इन फालतू बातों का कोई मतलब नहीं था। उसकी एकमात्र चिंता यही थी कि कहीं सुगंधी बाई का स्वभाव खर्चीला हुआ तो क्या होगा? ले-देकर फूलचंद सुगंधी बाई को लिवा लाया। काफी दिनों तक जब कोई घटना-दुर्घटना न हुई तो लोगों ने यह समझ लिया कि दोनों के स्वभाव की

पटरी अच्छी तरह से बैठ गई है।

लालू को शुरू-शुरू में तो फूलचंद की कंजूसी कहीं-न-कहीं खल जाया करती थी। किंतु गांव के लोगों के व्यवहार से वह बहुत खुश था। जीवन में जिस निश्चल स्नेह की वह कामना करता था, वह उसे अचानक ही इस रतनपुर गांव में मिल रहा था।

फूलचंद को लालू का गांव वालों से ज्यादा मेल-जोल अच्छा नहीं लगता था। वह उसे अकेले में समझाता भी। लेकिन लालू उसकी कमजोरियों को अच्छी तरह जान गया था। जान-बूझकर वह कभी ऐसा कोई काम न करता जिससे फूलचंद की भावना को चोट पहुंचे।

दूकान पर बिक्री अब बढ़ने लगी थी। फूलचंद को यही संतोष था। अब उसने जंगली फसलों की खरीद का अपना कारोबार बढ़ा लिया। प्रायः वह घर से बाहर रहता। दूकान की सारी जिम्मेदारी अब लालू पर ही आ गई।

फूलचंद के बाहर रहने पर लालू किसी तरह की अड़चन आने पर सुगंधी बाई से पूछ लिया करता था। सुगंधी बाई दिखने में चाहे जितनी सुंदर हो परंतु कंजूसी में उसका भी जवाब नहीं था। पति-पत्नी दोनों में कौन ज्यादा कंजूस है यह कह पाना लालू के लिए भी मुश्किल था।

फिर भी लालू किसी तरह निभाए जा रहा था। चूंकि दूकान की आय दिनों-दिन बढ़ रही थी और लालू को किसी तरह का कोई वेतन नहीं देना पड़ता था इसलिए गाड़ी अपनी पटरी पर बिना किसी रोक-टोक के चली जा रही थी। लालू तो गांव वालों का इतना प्रिय हो गया था कि लोग कभी-कभी अपने कई मामलों में उससे सलाह भी लेने लगे थे। सुगंधी बाई को यह सब पसंद नहीं था फिर भी स्वार्थ के कारण वह चुप थी।

खरीफ की फसल के कटते ही आसपास के गांवों में बारी-बारी से छोटे-छोटे मेले भरा करते थे। उसमें दूर-दूर के छोटे-मोटे व्यापारी आकर अपना माल बेच जाया करते थे। इस तरह वे काफी पैसा बना लिया करते थे।

लालू के मन में आया कि ऐसे मेलों में उसे भी अपनी दूकान ले जानी चाहिए। इस बारे में उसका मन हुआ कि वह सुगंधी बाई से बात करे। यद्यपि वह जानता था कि सुगंधी बाई इनकार कर देगी क्योंकि उसे जिन कामों में मजा आता था वह थे अपने पति फूलचंद को उंगली पर नचाना, अपने लिये गहने गढ़वाना और गरीबों को रुपये उधार देकर अनाप-शनाप ब्याज कमाना। ये तीनों ही काम बड़े मजे से चल रहे थे। सुगंधी बाई के सामने लालू ने अपना प्रस्ताव रखा तो उसने फूलचंद से सलाह लेने की बात कहकर लालू को निराश कर दिया।

समय देखकर लालू ने फूलचंद के सामने अपना इरादा रखा। फूलचंद ने सुगंधी बाई की तरफ देखा और बात आई-गई हो गई। लालू को इससे दुख तो हुआ मगर वह मन मारकर रह गया। दो दिन तक पति-पत्नी में विचार-विमर्श होने के बाद लालू से कहा गया कि वह दूकान को मेले में तो नहीं ले जा सकता लेकिन यदि वह चाहे तो आसपास के गांवों में होने वाले साप्ताहिक बाजारों में अपनी दूकान जरूर ले जा सकता है।

लालू ने यह प्रस्ताव मान लिया। लेकिन उसके साथ एक यह शर्त रख दी गई थी कि उसे कोई सवारी नहीं मिलेगी। कोई अतिरिक्त नौकर भी नहीं मिलेगा। जो कुछ करना है उसे अकेले ही करना है। बेकार की फिजूलखर्ची अच्छी नहीं।

लालू जीवट का आदमी था। चुनौती का सामना करने में उसे मजा आता था। उसने साप्ताहिक बाजारों में जाना शुरू कर दिया। काफी आय होने लगी। फूलचंद खुश था कि बिना

किसी खर्च के उसका व्यापार बढ़ता जा रहा है। सुगंधी बाई को भी भला क्या शिकायत होती क्योंकि उसके खजाने में दिन दूनी बढ़ोतरी हो रही थी।

ऐसे ही एक बार लालू एक साप्ताहिक बाजार से लौटने को था कि उसे ज्वर हो आया। सारा सामान लादकर लौट सकना उसके लिए संभव नहीं था। इस काम के लिए उसने एक रुपये की मजदूरी पर एक आदमी रख लिया।

घर पहुंचकर जब मजदूरी देने की बात हुई तो फूलचंद साफ अड़ गया। कहने-सुनने के बाद फूलचंद राजी हुआ तो सुगंधी बाई भड़क उठी। लालू को बहुत बुरा लगा। साल-भर से वह दूकान चला रहा है। हजारों रुपये अपनी मेहनत से कमाकर उन्हें दिये हैं। अपने लिए कभी उसने एक पैसा भी खर्च नहीं किया। आज जब वह बीमार है और उसके बदले में बोझा ढोने-वाले मजदूर को सिर्फ एक रुपया मजदूरी देने की बात आ गई है तो पति-पत्नी हल्ला मचा रहे हैं। ठीक है। लालू ने पहली बार अपनी नाराजगी प्रकट की। वह फूलचंद से बोला—"साल-भर से बिना वेतन लिए काम कर रहा हूं। कभी शिकायत का कोई मौका नहीं दिया। क्या मेरी ईमानदारी की यह कीमत है ? क्या मेरे लिए आप लोग एक रुपया भी खर्च नहीं कर सकते ? खैर, अब कान खोलकर सुन लीजिए। इस महीने से आपको प्रतिमास मुझे भोजन के अलावा कुछ न कुछ नगद वेतन भी देना होगा। वर्ना कल से मैं आपकी दूकान पर काम नहीं कर सकूंगा।"

लालू की बात सुनकर तो फूलचंद के होश उड़ गए। सुगंधी बाई भी भौचक्की रह गई। उन दोनों को सपने में भी यह उम्मीद नहीं थी कि लालू कभी इस तरह की बात करेगा। आखिर मामला तय हुआ। मजदूर को एक रुपया मजदूरी देकर लालू के लिए पांच रुपया प्रतिमास वेतन की बात पक्की हो गई।

गांव वाले तो यही चाहते थे कि लालू फूलचंद की दूकान छोड़कर अलग से अपनी कोई दूकान खोल ले। गांव वाले उसकी हर तरह से सहायता करने के लिए तैयार थे। परंतु लालू इस तरह का कोई विचार फिलहाल नहीं रखता था।

चैतमास में नौरात (नवरात्रि) का त्यौहार बड़ी धूमधाम से मनाया जाता। प्रति वर्ष की भांति इस बार भी फूलचंद पूजा का सारा सामान शहर से समय रहते ले आया था। लेकिन जिस दिन पूजा थी, शाम को एक हंगामा खड़ा हो गया। जितने लोग अगरबत्तियां खरीदकर ले गए थे, सबके सब उसे वापस करने आ धमके। उनकी शिकायत थी कि ये अगरबत्तियां नकली हैं। सस्ते में खरीदकर उन्हें मंहगे दामों पर बेचा जा रहा है। ये जलते-जलते बुझ जाती हैं। इनमें जरा-सी खुशबू तक नहीं है। अतएव इन्हें वापस लिया जावे।

फूलचंद घर पर नहीं था। लालू ने जांच-पड़ताल की। उसे भी लगा कि ये अगरबत्तियां सचमुच नकली हैं। गोबर कूटकर उसमें सस्ती सुगंध मिलाकर इन्हें बनाया गया है। सुगंधी बाई से उसने पूछा कि अब क्या किया जाए? सुगंधी बाई गांव वालों के इस रवैये पर आग-बबूला हो गई। लालू की गांव वालों के प्रति सहानुभूति ने उसके गुस्से को सातवें आसमान पर पहुंचा दिया। गरजकर बोली—"हमारी दूकान में एक बार बिका हुआ माल वापस नहीं लिया जाता। समझे।"

अपना गुस्सा दिखाकर सुगंधी बाई भीतर चली गई। मगर लोग दूकान के सामने से नहीं हटे। वे लालू से न्याय चाहते थे। आखिर लालू ने हिम्मत की। सबकी अगरबत्तियां वापस लेकर उन्हें पैसे दे दिये।

रात को जब फूलचंद लौटा तो सुगंधी बाई उसे कैकयी की तरह कोपभवन में मिली। उसकी जिद यही थी कि लालू को

फौरन से पेश्तर नौकरी से निकाल दिया जाए। वर्ना वह खुद मायके चली जाएगी।

फूलचंद ने इतमीनान से सारा किस्सा सुना। उसने सोचा कि अगर वह गुस्से में आकर लालू को नौकरी से निकाल देता है तो उसकी दूकानदारी बैठ जाएगी। और यदि वह लालू को नौकरी से नहीं निकालता है तो उसकी प्यारी पत्नी सुगंधी बाई मायके चली जाएगी। एक ओर कुआं, दूसरी ओर खाई। फूलचंद बड़ी मुसीबत में फंस गया था। अब क्या हो ?

लालू का मन इतना उदास हो गया कि वह गांव में घूमने निकल पड़ा। लोग-बाग आज के झगड़े के बारे में उससे पूछने लगे। लालू ने सबको सच बात बता दी। सबकी राय यही थी कि फूलचंद जैसे कंजूस और बेईमान आदमी के यहां काम करने से क्या फायदा। लालू को अब कोई स्वतंत्र काम कर लेना चाहिए।

लेकिन लालू अभी कोई निश्चय नहीं कर पा रहा था। उस रात बिना खाये-पिये ही वह दूकान की बगल में बनी अपनी कोठरी में आकर सो गया। तभी उसे पति-पत्नी के झगड़े की भनक मिली। उस दिन मंगलवार था। फूलचंद प्रति मंगलवार को हनुमान मंदिर जाया करता था। उस दिन जब मंदिर जा रहा था तो अचानक उसे याद आया कि घर में वह जलता हुआ दिया छोड़ आया है। उसे बुझाना जरूरी है। सुगंधी का क्या है। वह तो घोड़े बेचकर सो रही होगी। महंगाई का जमाना है, फिजूलखर्ची अच्छी नहीं है। वह लौट पड़ा। दरवाजा खटखटाते ही सुगंधी बाई से सामना हुआ। फूलचंद ने दिया बुझाने की बात कही। सुगंधी नाराज हो गई। क्योंकि फिजूलखर्ची न हो इस बात का ध्यान उसे भी है। साथ ही वह फूलचंद पर इसलिए बरस पड़ी कि वह अनावश्यक आने-जाने में जूता-घिसाई करता

है, अच्छा हो वह जूते निकालकर अपनी बगल में दबा लिया करे और फूलचंद ने जैसे चुप रहकर इस आदेश को स्वीकार कर लिया।

लालू अपनी कोठरी में पड़ा-पड़ा यह सब सुन रहा था। कोई पुरुष इतना पतित हो सकता है, इस बात की उसे कल्पना भी न थी। उसे विश्वास ही न हो रहा था कि दुनिया में इस तरह की कंजूसी भी कहीं हो सकती है। उसकी अन्तरात्मा उसे धिक्कारने लगी। आखिर वह किस नीच आदमी का साथ दे रहा है? उसने तत्काल फैसला कर लिया कि अब वह कहीं और कुछ काम कर लेगा लेकिन फूलचंद की दूकान पर हरगिज काम नहीं करेगा। सवेरे सुगंधी अपनी गठरी बांधकर मायके जाने के लिये तैयार थी। मगर जब उसने देखा कि लालू अपनी कोठरी छोड़कर कहीं चला गया है, तो उसने मायके जाने का इरादा बदल दिया।

किसी को नहीं मालूम कि लालू कहां चला गया। गांव में फूलचंद और सुगंधी बाई की आलोचना होती रही। उनकी कंजूसी पर ताने कसे जाते रहे। पर उन पर कोई असर न हुआ। लालू के काम छोड़ देने पर शुरू-शुरू में उन्हें दिक्कत जरूर हुई परंतु फूलचंद ने जल्दी ही पहले की तरह अपनी दूकानदारी पर काबू पा लिया।

अचानक तीन महीने बाद लालू रतनपुर गांव में फिर उपस्थित हो गया। लोगों को उसने बताया कि वह शहर से अगरबत्ती बनाने का काम सीख कर आ गया है। अब इसी गांव में रहकर वह अगरबत्तियां बनाएगा। मेलों तथा साप्ताहिक बाजारों में घूम-घूमकर वह इन्हें बेचेगा।

लालू का यह एलान फूलचंद और सुगंधी बाई ने भी सुना। भौंहें चढ़ाकर सुगंधी बाई ने अपने पति से कहा—"खबरदार,

जो लालू की बनाई हुई अगरबत्तियां तुमने अपनी दूकान के लिए खरीदीं ।"

o o o

उस साल इलाके में भयंकर गर्मी पड़ी । सारे जलाशय सूख गये । जगह-जगह जमीन फट गई । पशु-पक्षी प्यास के मारे मरने लगे । नदी से पानी लाना आसान नहीं था । एक कांवर पानी के लिए कोस-भर रास्ता तय करना पड़ता था । दो रुपये देने पर पर भी कोई किसी के लिए पानी लाने को तैयार नहीं था ।

आषाढ़ का महीना आ गया । आसमान में दूर-दूर तक कोई बादल दिखाई नहीं देता था । किसानों में त्राहि-त्राहि मच गई । अगर यही हाल रहा तो हल कैसे चल पाएंगे ! फसल नहीं होगी । फसल नहीं होगी तो लोग भूखों मर जाएंगे ।

देखते-ही-देखते इलाके में अकाल की काली छाया घिर आई । लोग गांव छोड़कर भागने लगे । लालू के कई साथियों ने भी गांव छोड़ देने का इरादा जाहिर किया । लालू ने उन्हें समझाया कि भागने से समस्या हल नहीं होगी । हमें कुछ-न-कुछ करना ही होगा ।

प्रतिदिन गांव में कई-कई बार बैठकें होने लगीं । सबकी आशा लालू पर लगी हुई थी । लालू बुद्धिमान है । जरूर कोई-न-कोई रास्ता निकालेगा ।

लालू के साथियों में कुछ ऐसे भी थे, जिनका विचार था कि फूलचंद ने इस बीच खूब अनाज इकट्ठा कर लिया है । उसके घर हमला बोल देना चाहिए । उसके कोठे का सारा अनाज लूट लेना चाहिए ।

लेकिन लालू का विश्वास लूट-पाट में नहीं था । पहले तो उसने गांव की पंचायत से कुछ करने के लिए कहा । परंतु पंचायत भी गरीब थी । अकाल का सामना करने की हिम्मत

उसमें नहीं थी। लालू ने तय किया कि बात इलाके के जमींदार तक पहुंचनी चाहिए। जमींदार अपनी प्रजा के लिए जरूर कुछ-न-कुछ करेगा।

देखते-ही-देखते एक प्रतिनिधि मंडल कंचनपुर के लिए रवाना हो गया। लालू गांव में रहकर अपने युवा साथियों को सम्हाले हुए था। उसे शंका थी कि कहीं वे फूलचंद के घर पर हमला न बोल दें।

लोग अब प्रतिनिधि मंडल के लौटने की राह देख रहे थे। लालू को उम्मीद थी कि जमींदार अपनी भूखी प्रजा के लिए जरूर कुछ-न-कुछ करेगा। उसके पास खूब अनाज होगा। लेकिन जब प्रतिनिधि मंडल लौटकर आया तो लोगों को बड़ी निराशा हुई। उनका कहना था कि उन लोगों को जमींदार तक पहुंचने ही नहीं दिया गया।

स्थिति थी कि सम्भलने में न आ रही थी। अब भी कुछ लोग भाग रहे थे। कुछ लोग लूट-पाट की बातें सोच रहे थे। लालू के मन में रह-रहकर एक ही बात घुमड़ रही थी कि बिना ज़मींदार से मिले, उसे दोष देना ठीक नहीं। लेकिन उसकी समझ में यह नहीं आ रहा था कि लोग आखिर उनसे मिल क्यों नहीं पाते।

एक दिन लालू अपने चुने हुए साथियों को लेकर कंचनपुर के लिए रवाना हो गया। राजधानी पहुंचकर उसने जमींदार से मिलना चाहा। लेकिन उसकी बात सुनने वाला वहां कोई नहीं था। वह जिस किसी से भी पूछता, वह जमींदार साहब के व्यस्त होने की ही बात कहता।

अब क्या किया जाय? लालू राजधानी में दो दिनों तक ठहरा रहा। इस बीच उसे पता चला कि जमींदार रात-दिन खुशामदखोरों से घिरा रहता है। रात-दिन नाच-गाने में ही मगन रहता है। सुबह देर गये तक उठता है। दलाल उसे फिर

घेर लेते हैं। इलाके में क्या हो रहा है इस बात की उसे चिंता ही नहीं है। लालू समझ गया कि इलाके के सुख-दुख की बात जमींदार के कानों तक पहुंचती ही नहीं है। ऐसी हालत में अकाल का निवारण भला कैसे हो सकता है ?

लालू भी अपने साथियों समेत लौट आया। उसे बड़ी निराशा हुई थी। लेकिन कुछ-न-कुछ तो करना ही होगा। हाथ पर हाथ धरे बैठे रहने से तो काम नहीं चलेगा। एक दिन लोगों ने देखा कि लालू अचानक अपने घर से गायब है। पता नहीं वह कहां चला गया।

कहावत है कि जहां चाह, वहां राह। आदमी कठिनाइयों के सामने कमर कस ले तो उसे सफलता मिलकर ही रहती है। लालू यही सोचकर घर से निकला था कि वह किसी-न-किसी तरह जमींदार से मिलकर ही रहेगा। उन्हें प्रजा के दुख की बात बताएगा। और प्रार्थना करेगा कि इस भीषण अकाल के समय वे लोगों की हर प्रकार से सहायता करें। यदि अपने इस अभियान में लालू को सफलता नहीं मिली तो वह रतनपुर कभी नहीं लौटेगा।

लालू राजधानी कंचनपुर में अगरबत्तियों के एक व्यापारी के रूप में पहुंचा। कुछ लोगों ने उससे अगरबत्तियां खरीदीं। लोगों को वह पसंद आईं। होते-होते लालू जमींदार की गढ़ी के सामने उपस्थित हो गया।

सूरज निकले एक प्रहर हो चुका था। गढ़ी में अभी तक कोई हलचल नहीं थी। लालू ने पहरेदार से दोस्ती गांठी। कहा—"मैं जमींदार साहब से मिलना चाहता हूं।"

"कौन हो तुम ?"

"जमींदार की ही एक प्रजा समझो भैया।"

"क्या काम है ?"

"रतनपुर क्षेत्र में अकाल पड़ गया है। उन्हें इस बात की जानकारी देनी है।"

"तुम क्या वहां के मुखिया हो ?"

"मुखिया तो नहीं, साधारण प्रजा हूं।"

"जाओ-जाओ, ऐसे ऐरे-गैरे लोगों से जमींदार साहब नहीं मिला करते।"

"भैया, मैं तुम्हारे हाथ जोड़ता हूं। एक दुखी प्रजा की हैसियत से न सही, अगरबत्ती के एक व्यापारी के रूप में ही मुझे भीतर जाने दो।"

"नहीं, तुम भीतर नहीं जा सकते।"

"मेरी अगरबत्तियां तो देखो, तुम्हें भी पसन्द आयेंगी !"

"मेरे पास तुम्हारी ये बकबक नहीं चलेगी। भाग जाओ, वर्ना···

लालू को एक सूत्र हमेशा याद रहता। हारिए न हिम्मत बिसारिए न हरि नाम। पहरेदार ने उसका अपमान किया था। लेकिन वह उस गुस्से को पी गया था। सचाई के लिए मर जाना भी उसे मंजूर था। वह गढ़ी के दरवाजे के पास ही जाकर बैठ गया।

पहरेदार नाराज था। घूर-घूरकर उसे देख रहा था। लालू के चेहरे पर कुछ ऐसा सौम्य भाव था कि पहरेदार उस पर आगे कोई सख्ती न कर सका। लालू को उसने बैठ जाने दिया।

लालू की नजरें गढ़ी के आसपास घूमने लगीं। चारों तरफ मजबूत दीवारें थीं। उनमें चार दरवाजे थे। हर दरवाजे पर पहरा था। जहां वह बैठा था यही मुख्य दरवाजा था। दूर-दूर तक गढ़ी के झरोखे नजर आ रहे थे। उन पर रंग-बिरंगे परदे लगे हुए थे। अचानक एक परदा सरका, शायद यह जमींदार साहब के जाग उठने का संकेत था। लालू की आंखों में चमक

आ गई। उसने अपना काम शुरू कर दिया।

पहरेदार से ही दियासलाई मांगकर लालू ने ढेर-सी अगर-बत्तियां जला दीं। कैसी मनभावन सुगंध थी। पहरेदार का भी मन झूम उठा। सुगंध उठती गई—उठती गई और जाकर गढ़ी के झरोखों से टकरा गई।

जादू का-सा असर हुआ। एक प्यारी-सी घंटी हुई। किसी को पुकारने की आवाज आई। लालू ने देखा कि भीतर से पहरेदार की तरफ कोई बढ़ता चला आ रहा है। उसकी आत्मा प्रसन्न हो उठी।

आगन्तुक ने पहरेदार से लालू का सब हाल-चाल लिया और भीतर जा पहुंचा। थोड़ी ही देर में वह फिर बाहर आया और अबकी बार वह लालू को अपने साथ लेकर गढ़ी के अंदर चल पड़ा।

लालू ने अपनी जिन्दगी में ऐसा ठाट-बाट नहीं देखा था। बाहर सुंदर बाग-बगीचे थे। भीतर चकाचौंध करने वाला न जाने क्या-क्या था। एक ओर इतना वैभव और दूसरी तरफ हाहाकार। लालू का माथा चकराने लगा। दूसरे ही क्षण लालू जमींदार के सामने था। जमींदार ने पूछा—"युवक, तुम कौन हो, क्या चाहते हो, बाहर बैठकर इतनी अगरबत्तियाँ क्यों जला रहे हो?"

लालू को तो इसी क्षण की प्रतीक्षा थी। वह बोला—"महा-राज, मैं आपकी ही एक प्रजा हूं। रतनपुर में रहता हूं। उस क्षेत्र में अकाल पड़ गया है। त्राहि-त्राहि मची हुई है। सबकी आशा आप पर लगी हुई है, परंतु दुख इस बात का है कि अपना दुख सुनाने के लिए लोगों को आपके पास आने नहीं दिया जाता। मेरे गांव से भी बड़े-बूढ़े लोग प्रतिनिधि मंडल बनाकर आपसे मिलने आये थे। लेकिन आपके कारिन्दों ने उन्हें भगा

दिया। फिर मैं अपने कुछ साथियों को लेकर आपसे मिलने आया था, मगर अफसोस कि मुझे भी तब आपसे मिलने नहीं दिया गया। हताश होकर मैंने मन-ही-मन यह प्रतिज्ञा की, कि अब चाहे जो भी हो, मैं आपसे मिलकर ही रहूंगा। प्रजा के दुख को आपके कानों तक पहुंचाऊंगा। यही कारण है कि मैंने अगर-बत्तियों का सहारा लिया। क्योंकि लोग किसी की आवाज को भले ही रोक दें, परंतु सुगंध को कोई नहीं रोक सकता। ईश्वर का बहुत-बहुत धन्यवाद कि मेरी अगरबत्तियों की सुगंध आप तक पहुंची और मुझे आपके दर्शनों का लाभ मिला है। प्रजा की तकलीफें आपने सुनीं। मैं आशा करता हूं कि आप अवश्य ही अपनी भूखी प्रजा के लिए कुछ करेंगे।"

जमींदार को लालू का यह ढंग बड़ा पसंद आया। वे उसकी निर्भीकता से निस्संदेह प्रभावित हुए। कहा—"बैठो, युवक। मैं तुम्हारी बुद्धि की तारीफ करता हूं। मुझे रतनपुर क्षेत्र के अकाल की बिलकुल सूचना नहीं है। राजधानी में बहुत-सा अनाज सुर-क्षित है। मैं आज ही उसके उचित वितरण की व्यवस्था करता हूं।"

लालू का मन नाच उठा। उसकी साधना सफल हुई। अब वह बड़े गर्व के साथ रतनपुर लौट सकेगा। लोग अब अपना घर, अपना गांव छोड़कर नहीं भागेंगे। जमींदार के प्रति उसका सिर श्रद्धा से झुक गया।

लालू ने जमींदार से अब विदा मांगी। जमींदार को लगा कि उसके कारिन्दों के द्वारा यदि अनाज का वितरण हुआ तो उसमें धांधली की बहुत गुंजाइश रहेगी। और लोगों को सही समय पर सहायता नहीं मिल पाएगी। यही सब सोचकर जमींदार ने लालू से कहा—"युवक, तुमसे यदि हो सके तो अनाज वितरण के काम में हमारी मदद करो। चूंकि अनाज

विभाग के प्रधान की जगह अभी खाली है। हम उसके लिए किसी अच्छे आदमी की तलाश में हैं। जब तक यह काम नहीं हो जाता तब तक अनाज वितरण की व्यवस्था अच्छी हो सकेगी,

ऐसा मैं नहीं मानता। तुम अपने इलाके से अच्छी तरह परिचित हो, यदि तुम इस व्यवस्था में हाथ बंटाओ तो काम सही समय

पर और ईमानदारी के साथ हो सकेगा।

अंधे को क्या चाहिए—सिर्फ दो आंखें। लालू ने सहर्ष यह जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली। राज के कारिन्दों से भी वह मिला। उनमें उत्साह की कमी थी। अतएव उसने रतनपुर खबर भेजकर अपने साथियों को बुलवा लिया। सबके उत्साह की सीमा न थी। देखते-ही-देखते सप्ताह-भर में पूरे अकाल क्षेत्र में अनाज पहुंच गया। जमींदार को इस सफलता पर बड़ी खुशी हुई।

लेकिन जमींदार साहब के कारिन्दों को यह बात पसंद न आई। वे ऊपर-ऊपर से तो लालू की प्रशंसा करते रहे किंतु भीतर-भीतर बदले की भावना से सुलग उठे। यह उनके अधिकारों पर कुठाराघात था। कोई बाहरी आदमी इस तरह उनको बौना बना दे यह उनके लिए कतई बरदाश्त होने वाली बात नहीं थी।

जमींदार के मन में लालू का जादू कुछ ऐसा बैठ गया था कि वे उसे छोड़ना नहीं चाहते थे। अपने सलाहकारों के साथ बात-चीत करके वे चाहते थे कि लालू को अनाज विभाग का प्रधान बना दिया जाए।

जमींदार साहब के इस प्रस्ताव का सबने घुमा-फिराकर विरोध किया। क्योंकि प्रधान जी का चुनाव जल्दी ही होने वाला था। हर आदमी यही चाहता था कि उस महत्त्व के पद के लिए उनका अपना आदमी ही चुना जाए। जमींदार साहब चुप थे। वे लोगों की इस कमजोरी को अच्छी तरह से जानते थे। परंतु परंपरा कुछ ऐसी चली आ रही थी कि जमींदार साहब हर बात में प्रायः मीन-मेख नहीं करते थे।

लेकिन ऐसे में तो लालू रतनपुर लौट जाएगा। जमींदार साहब उसकी कार्य-कुशलता पर मुग्ध हो चुके थे। वे उसे किसी

भी कीमत पर राजधानी में ही रखना चाहते थे।

घुमा-फिराकर वे अपनी इस इच्छा को अपने दरबारियों के सामने रखते रहे। घंटों 'हां' और 'ना' का नाटक चलता रहा। अंत में जमींदार की उत्कट इच्छा जानकर लालू को एक मामूली कर्मचारी का पद दे दिया गया।

रतनपुर वालों ने जब यह खबर सुनी तो उनकी खुशी का ठिकाना न रहा। उन्हें लालू साक्षात् देवता नजर आने लगा। कई तो मारे खुशी के लालू से मिलने कंचनपुर आ धमके। लालू अपने इलाके में इतना लोकप्रिय है यह जानकर जमींदार साहब को बड़ी प्रसन्नता हुई।

रतनपुर से लोग लालू से मिलने आये। कई लोग तो एक से अधिक बार मिलकर चले गये। परंतु लालू की आंखें प्रायः एक खास व्यक्ति को देखना चाहती थीं। परंतु वह कहीं देखने में नहीं आता था। काश, कि मिलने वालों में फूलचंद भी होता।

o o o
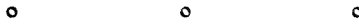
लालू को राजकर्मचारी का पद मिल तो गया, लेकिन उसे कदम-कदम पर काम करने में अड़चनें आने लगीं। उसके छोटे-से-छोटे काम में भी राज्य के पुराने ओहदेदार टांग अड़ाने लगे। दीवान जी, दरोगा जी और कामदार जैसे लोगों में भी यही भावना घर कर गई थी कि लालू के रहते अब उनका मतलब सध पाना मुश्किल है।

लालू एक सीधा-सादा ग्रामीण युवक था। उसे किसी प्रकार का कोई लोभ नहीं था। वह सच्चे मन से लोगों की सेवा करना चाहता था। घूस लेना वह पाप समझता था। बड़े लोगों का अनावश्यक विरोध उसकी समझ में न आता था।

तंग आकर एक दिन उसने जमींदार साहब से यह बात कही। जमींदार साहब उसकी बात सुनकर हंस पड़े। बोले—

बेटा, हर तरह की व्यवस्था में ऐसा हो होता है। कुछ लोग स्वार्थ साधन में इस कदर लिप्त हो जाते हैं कि उन्हें दूसरों का कभी ख्याल ही नहीं आता। सच्चाई को वे कभी प्रकट होने नहीं देते। और इस प्रकार वे व्यवस्था में एकाधिकार बनाये रखकर अपना उल्लू सीधा करते हैं। तुम नौजवान हो। ईमानदार हो। अपना काम निष्ठा के साथ करो। डरने की कोई जरूरत नहीं। तुम्हें सफलता जरूर मिलेगी।"

दीवान जी ने जब देखा कि लालू जमींदार साहब की नाक का बाल बना हुआ है तो उन्होंने दरोगा जी तथा कामदार को अपनी ओर मिला लिया। वे तीनों हमेशा इस ताक में रहने लगे कि लालू का कोई भी काम बनने न पाये।

धीरे-धीरे राज-काज की खींचतान लालू की समझ में आने लगी। वह अपना काम मुस्तैदी से करने लगा। उसे विश्वास था कि यदि प्रजा खुश है तो कोई उसका कुछ बिगाड़ नहीं सकता। जमींदार साहब का वरदहस्त उस पर था ही। वह बिलकुल निश्चिंत हो गया।

कुछ दिनों बाद राजधानी में प्रधान जी के चुनाव की चर्चा गरम हो चली। कई प्रकार की बातें होतीं। अफवाहें उड़तीं। लालू की समझ में यह नहीं आता था कि किसी सीधे-सादे मसले को लोग इस तरह बढ़ा-चढ़ाकर, आखिर क्यों उछालते हैं?

प्रधान जी के चुनाव को अब दो दिन बाकी रह गये थे। ऐसे कामों के लिये पहले कोई नियम नहीं था। जमींदार साहब जिसे योग्य समझते उसे ही वह पद दे दिया जाता था। लेकिन बाद में अवसरवादियों ने कुछ ऐसे नियम बना डाले जिससे कि महत्त्व-पूर्ण पद का चुनाव एक चुनाव समिति के द्वारा किया जाने लगा।

अबकी बार जो चुनाव समिति बनी उसमें जमींदारी के दो

सयाने भूतपूर्व अधिकारियों को लिया गया था। एक सदस्य स्वयं जमींदार साहब थे। तथा उनकी ही इच्छा से अंतिम सदस्य के रूप में लालू की भी नियुक्ति कर दी गई।

इस चुनाव समिति के निर्माण से ओहदेदारों में हड़कम्प मच गया। काफी शोरगुल मचा। जमींदार साहब से अनुनय-विनय की गई परंतु किसी की भी दाल नहीं गली। जमींदार साहब का फैसला अटल था। दीवान जी और उसके दल के लोग यह समझ रहे थे कि यह एक मात्र लालू की ही शरारत है।

चुनाव के पहले दिन का नजारा अद्भुत था। दीवान जी का भतीजा इस पद के लिए उम्मीदवार था। दीवान जी लालू के पास कई बार हाथ-पैर जोड़ने आये। दरोगाजी की इच्छा थी कि यह पद उसके भांजे को ही मिले। अतएव वे भी लालू की खुशामद करते देखे गये। कामदार साहब अपने साले के लिए कोशिश करते रहे। कुल मिलाकर यह दृश्य अच्छा नहीं था। लालू अपना एक सुझाव लेकर जमींदार साहब के पास जा पहुंचा।

जमींदार साहब ने लालू की बातें ध्यान से सुनीं। लालू का सुझाव था कि प्रधान जी के पद के लिए कुल चार प्रार्थी हैं। वे सब अतिथि गृह में आकर ठहर चुके हैं। कल उनकी प्रतिभा का मौखिक परीक्षण तो होगा ही, क्यों न आज चयन समिति के सदस्य उनका रहन-सहन और बर्ताव दूर से ही देख लें। बात जमींदार साहब को जंच गई। चारों सदस्य भेष बदलकर घूमते हुए अतिथि गृह में जा पहुंचे।

चारों सदस्य सामान्य वेशभूषा में थे। ऐसा लगता था मानो वे अतिथि गृह के ही मामूली कर्मचारी हों। प्रार्थियों में से एक को छोड़कर सबके ठाठ बिलकुल निराले थे। जैसे वे कहीं के राजकुमार हों। वे घमण्ड से भरे हुए थे। उनमें विनम्रता का नाम नहीं था। उनकी बातचीत में शालीनता नहीं थी।

चौथा प्रार्थी कुछ अलग हटकर था। सादी वेशभूषा में वह एक स्वावलंबी युवक लगता था। उसके व्यवहार में कोई आडम्बर नहीं था। बातचीत में विनम्रता के साथ-साथ निर्भीकता थी। चारों सदस्य अपने भावी प्रधान जी का अप्रत्यक्ष परिचय लेकर लौट आये।

लौटकर वे जमींदार साहब के यहां कुछ देर के लिये बैठे। जमींदार साहब ने अपना सुझाव उस ग्रामीण युवक की तरफ बता दिया। लालू भी उससे प्रभावित हुआ था। शेष दो सदस्यों में एक का मत था कि अंतिम रूप से फैसला कल ही हो सकेगा। परंतु लालू उनके मन के भ्रम को तोड़ देना चाहता था। उसने कहा—"राज्य कर्मचारियों को सादगीपूर्ण और ईमानदार ही होना चाहिए। जो व्यक्ति केवल अपने तक ही केन्द्रित हो, उससे जन-सेवा की आशा भला कैसे की जा सकती है? ऐसे लोग तरह-तरह की सिफारिशें लेकर आते हैं। ऐसे चुनावों में अक्सर सही आदमी छूट जाता है। अतएव मेरी तो यही प्रार्थना है कि आप सब कल जो भी फैसला करें वह गुणों के आधार पर ही हो।"

इतना कहकर जब लालू ने जमींदार साहब की ओर देखा तो उनका मुख गर्व से चमक रहा था। शायद इस विश्वास से कि कल उन्हें अपनी जमींदारी के लिए एक योग्य प्रधान मिल जाएगा।

चुनाव के दिन वही हुआ जो होना था। सर्वसम्मति से उस ग्रामीण युवक का चुनाव प्रधान पद के लिए हो गया। भांजे, भतीजे और साले साहब लटकते ही रह गये। निर्णय सुनकर प्रजा पहली बार खुश हुई कि जमींदार साहब को अपनी कठपुतली बनाकर रखने वाला त्रिगुट पहली बार बेअसर सिद्ध हुआ है।

तरह-तरह की अफवाहें फैलाई गई कि प्रजा इस चुनाव से असंतुष्ट है परंतु जमींदार साहब पर इसका कोई असर न हुआ। हां, लालू की स्थिति कुछ कठिनाई में जरूर पड़ गई। दीवान जी और उनके साथी अब इस ताक में रहने लगे कि येनकेन प्रकारेण इस लालू का पत्ता कटना ही चाहिए।

कई बार ऐसा होता है कि होम करते हुए भी हाथ जल जाते हैं। लालू अपनी शक्ति-भर प्रजा की भलाई चाहता था। वह भूलकर भी ऐसा काम न करता था जिससे जमींदारी की व्यवस्था कमजोर हो। दुश्मन उसकी ताक में रात-दिन लगे हुए थे।

आखिर लालू के दुश्मनों को एक मौका मिल ही गया। गांव में जमीन की बेदखली का एक पुराना मामला था। मंगतू नाम के एक मोहित किसान की जमीन एक मामूली-सी बात पर छीन ली गई थी। वह पिछले कई सालों से अपनी जमीन पाने के लिए दरख्वास्तें कर रहा था, मगर उसकी कोई सुनवाई न हो रही थी।

जब शिकायत लालू के पास पहुंची तो उसने मामले की छानबीन की और उसे लगा कि दीवान जी उस आदमी के मामले में जान-बूझकर अड़ंगा लगाये हुए हैं। उसने तत्काल उस किसान को उसकी जमीन लौटा दी।

इस मामले को लेकर दीवान जी को लालू के विरुद्ध अच्छा-खासा मसाला मिल गया। चूंकि यह मामला—रानी मां से संबंधित था इसलिए वह समय निकालकर उनसे मिला। चरण-स्पर्श करने के बाद बोला—

"अब तो जमींदारी के भगवान ही मालिक हैं।"

"क्यों, क्या बात हो गई?"

"बड़ा अंधेर हो रहा है इन दिनों।"

"किसकी शामत आई है जो हमारे राज में अंधेर मचा रहा है ?"

"लालू का नाम तो आपने सुना ही होगा ?"

"वह तो बड़ा अच्छा लड़का है, जमींदार साहब बता रहे थे ।"

"नहीं रानी-मां, उसके पेट में दांत हैं ।"

"आखिर उसने ऐसा क्या किया है, कुछ कहो भी ।"

"मोहित किसान का नाम तो आपको याद ही होगा ।"

"हां, याद क्यों नहीं होगा, वही न जिसने मेले में हमारा अपमान किया था ।"

"हां रानी-मां, वही ।"

"हमने तो उसकी जमीन छीन ली थी न ।"

"हां रानी-मां, लालू ने उसे वह जमीन फिर लौटा दी ।"

"ताज्जुब है, हमसे बिना पूछे आखिर उसकी यह हिम्मत कैसे हुई ?"

"उसका दिमाग इन दिनों सातवें आसमान पर पहुंच गया है, रानी-मां, अपने सामने तो वह किसी को कुछ गिनता ही नहीं ।"

"खैर, उसे हमारे पास भेज दो, हम उससे समझ लेंगे ।"

"लेकिन रानी-मां, वह तो आजकल जमींदार साहब की नाक का बाल बना हुआ है, जरा चतुराई से काम लेना होगा, तब जाकर बात बनेगी ।"

"ठीक है, अब तुम जाओ ।"

इधर दरोगा जी भी जमींदार साहब के कान फूंकने के लिए चले आए । पहले इधर-उधर की बातें कीं फिर कहने लगे— "इधर लालू की हरकतें कुछ बढ़ती जा रही हैं ।"

"क्यों क्या हुआ ?"

"वह अपनी औकात से बाहर जा रहा है।"

"आखिर उसने ऐसा क्या कर दिया है, बताओ तो सही ?"

"रानी मां के दुश्मन मोहित किसान की जमीन आज उसने वापस कर दी।"

"अच्छा···?"

जमींदार साहब को अचानक चुप हुआ देख दरोगा जी ने फिर आग लगाई—"लगता है उसने यह काम घूस लेकर ही किया है।"

"घूस लेने का कोई प्रमाण है तुम्हारे पास ?"

"प्रमाण तो हुजूर, एक क्या अनेक जुटाये जा सकते हैं।"

"असली या किराये के ?"

"नहीं हुजूर ऐसी कोई बात नहीं है।"

"खैर, तुम अभी जाओ, मैं इस मामले पर सोचूंगा।"

रात को लालू अपना काम-काज निपटाकर सोने जा रहा था कि गढ़ी से जमींदार साहब का बुलावा आ गया। लालू को इससे कोई ताज्जुब नहीं हुआ। अक्सर जरूरत पड़ने पर जमींदार साहब उसे इसी तरह बुलवा लिया करते थे।

लालू जब जमींदार साहब के पास पहुंचा, वे अकेले बैठे थे। रानी-मां अभी-अभी उनके पास से उठकर गई थीं। वे बहुत उदास दिखलाई पड़ रहे थे। कुछ देर चुप रहकर उन्होंने पूछा—"तुमने मोहित को जमीन क्यों वापस कर दी ?"

"मैंने, उसके सारे मामले की छानबीन कर लेने के बाद ही यह कदम उठाया है।"

"लेकिन···।"

"मैं सोचता हूं कि इस मामले में आपको भी भ्रम में रखा गया है। मोहित ने रानी-मां का कोई अपमान नहीं किया। अपमान की कहानियां दीवान जी और उनके दल के द्वारा ही

फैलाई गई हैं। दरअसल झगड़ा मोहित से दीवान जी का था। जमीन का उपयोग भी अब दीवान जी के रिश्तेदार ही कर रहे हैं। छोटे कारिंदे जमीन वापस दिलवाये जाने के नाम पर उस गरीब मोहित से आज पिछले दस वर्षों से घूस लेते आ रहे हैं। अब बताइए कि क्या इसमें आपकी बदनामी नहीं है? प्रजा इस सचाई को जानती है। मैं नहीं चाहता कि दीवान जी के स्वार्थ के लिए लोग आपको अपयश देते रहें। मोहित बेकसूर है। अतएव मैंने उसकी जमीन उसको लौटा दी।"

"लेकिन लालू, बात काफी आगे बढ़ गई है। अभी-अभी रानी उठकर गई है, दीवान और उसके दल के लोगों ने उसको इस कदर भड़का दिया है कि आज वह आपे में नहीं है।"

"मुझे लगता है कि दीवान जी और उनके साथियों को मेरा यहां रहना पसंद नहीं है। यदि आप मुझे आज्ञा दें तो मैं कल ही अपने गांव वापस चला जाऊं।"

"मुझे कुछ सोचने दो लालू। अब कल सुबह ही बात होगी।"

सुबह-सुबह लालू के नाम एक फरमान जारी किया गया कि राज्य को उसकी सेवा की जरूरत नहीं है। लालू को इस बात से तनिक भी दुख न हुआ। क्योंकि किसी पद का उसे कभी मोह नहीं रहा। जमींदार साहब ने ही अपनी खुशी से उसे राज-कर्मचारी बनाया था। उन्होंने ही आज उसे छुट्टी दे दी। लालू रतनपुर जाने की तैयारी करने लगा।

चलने से पहले लालू जमींदार साहब को प्रणाम करने आया। उसे देखकर जमींदार साहब का मन भर आया। जाने क्या बात थी कि लालू को वे बेहद चाहने लगे थे। और किसी भी कीमत पर उसे छोड़ना नहीं चाहते थे। बोले —"मानोगे तो एक बात कहूं।"

"आज्ञा दीजिए।"

"तुम यहीं रहो, कोई व्यापार करो। रुपये-पैसे की मैं तुम्हें मदद करूंगा।"

लालू को यह कल्पना ही नहीं थी कि ऐसा भी कोई प्रस्ताव उसके सामने आएगा। वह तो रतनपुर जाने के लिए बिलकुल तैयार होकर ही आया था। जमींदार साहब ने आगे कहा— "देखो लालू, मेरी कोई संतान नहीं है। मैं तुम्हें पुत्र की तरह चाहने लगा हूं। मैं चाहूं तो आतंक से काम ले सकता हूं। लेकिन वैसा मेरा स्वभाव नहीं है। तुम यहीं रहोगे तो कभी-कभी तुम्हारी उपयोगी सलाह मुझे मिलती रहेगी। मेरे चारों तरफ शैतान लोग जमा हैं। वे कभी भी मुझे नुकसान पहुंचा सकते हैं। तुम्हारे चले जाने से मैं अकेला हो जाऊंगा। आशा है तुम मेरा कहा मानोगे।"

लालू के पास जमींदार साहब की आज्ञा मानने के सिवा और कोई चारा न था। घर जाकर उसने अपना बोरिया-बिस्तर खोल दिया और कुछ ही दिनों बाद उसने कंचनपुर में अनाज की एक शानदार आढ़त की दूकान खोल दी।

o o o

एक साल बीत गया। लालू का कारोबार खूब चल निकला। लोग उस पर विश्वास करते थे। उसका लेन-देन साफ था। गाढ़े के समय वह बिना लिखा-पढ़ी के ही लोगों की मदद किया करता था।

दीवान जी का त्रिगुट ईर्ष्या से भरा बैठा था। लेकिन लालू अब उनकी पकड़ के बाहर था। दीवान जी भी एक तरह से खुश थे कि अब उनके काले कामों को जमींदार तक पहुंचाने वाला कोई न रहा। वे खुलकर खेलने लगे। प्रजा फिर से त्रस्त रहने लगी। जमींदार तक उनकी आवाज पहुंचती ही नहीं थी। जमींदार

साहब लाचार थे। उनके पास काम करने वाला कोई ईमानदार आदमी ही नहीं था। लालू देखता था कि जमींदार साहब इधर काफी दुखी रहने लगे हैं।

लालू को इस बीच दीवान जी के बारे में बहुत कुछ सुनने को मिला। यह कि दीवान जी का रानी-मां पर बड़ा प्रभाव है। जमींदार तो नाम मात्र के हैं। असली जमींदार तो दीवान जी ही हैं। उनके रिश्तेदार ऐश कर रहे हैं। कोई रोक-टोक नहीं है। चाहे जो उत्पात करें। कोई सुनवाई नहीं।

सुन-सुनकर लालू को दुख होता। उसका विद्रोही मन तिल-मिला उठता। कई बार उसके मन में आता कि वह प्रजा को विद्रोह के लिए जागृत करे। लेकिन प्राय: उसे यही लगता कि कंचनपुर में कोई उसका अपना नहीं है। वह बिलकुल अकेला है। हो सकता है कि उसकी इस कार्यवाही से जमींदार साहब के मन को चोट लगे।

अचानक एक दिन जमींदार साहब चल बसे। पहले तो किसी को विश्वास ही नहीं हुआ। लेकिन बात सूरज की तरह साफ थी। प्रजा की रही-सही आशा भी जाती रही। सबको लगने लगा कि शासन अब निरंकुश हो जाएगा। दीवान जी ही सर्वेसर्वा हो जाएंगे।

और बात सच हो गई। अभी जमींदार साहब के क्रिया-कर्म भी पूरे न हुए थे कि प्रजा का दमन शुरू हो गया। लोगों की जमीन छीनी जाने लगीं, बेगार का काम बढ़ गया। न्याय मिलना सपने की बात हो गई।

लालू का मन फिर टूट गया। जमींदार साहब के न रहने पर उसका कंचनपुर में अब कौन था? दीवान जी का त्रिगुट अब किसी भी समय, किसी भी कारण से उसे कटघरे में खड़ा कर सकता था।

धीरे-धीरे लालू का मन व्यापार से हटता गया। कुछ हितैषी लोग उसे समझाते भी कि हताश होने से काम नहीं चलेगा। इस दुनिया में हमेशा बुरे लोगों की ही नहीं चलती। एक-न-एक दिन सचाई की जीत जरूर होती है। घूरे के दिन भी बहुरते हैं।

लेकिन लालू दुनिया में होने वाले स्वार्थ व्यापार को देखकर इतना ऊब गया था कि उसका मन अब कुछ भी करने के लिए तैयार न था। रह-रहकर उसके मन में यही बात आती थी कि सारा कारोबार समेटकर किसी जंगल में चल दिया जाए। जहां उसकी आत्मा को किंचित् शांति मिल सके।

तभी एक दुर्घटना हुई। एक दिन सुबह-सुबह दीवान जी रानी-मां का संदेश लेकर आये। कहने लगे कि जमींदार साहब की मृत्यु के बाद राज्य के खजाने में काफी कमी हो गई है। दिन-प्रतिदिन के काम-काज के लिए भी पैसे नहीं है। जमींदार साहब ने व्यापार के लिए तुम्हें जो रुपये दिये थे, रानी मां चाहती हैं कि अब वक्त आ गया है, तुम रुपये वापस कर दो।

लालू समझ गया कि जमींदार साहब की मृत्यु के बाद रानी मां के बहाने दीवान जी का यह उस पर पहला आक्रमण है। लालू ने दीवान जी को समझाया कि सारा रुपया अभी चुका सकने की स्थिति में वह नहीं है। हां, सुविधानुसार यह रकम आसान किस्तों में ही चुकाई जा सकती है। क्योंकि व्यापार ही कुछ ऐसा है कि पैसा इधर-उधर फंसा रहता है। एक ओर से आता है तो दूसरी ओर से चला जाता है।

दीवान जी बोले—"कुछ भी हो लालू, रुपये तो तुम्हें एक साथ ही पटाने होंगे। इस काम के लिए तुम्हें कुछ मोहलत जरूर दी जा सकती है। समय पर रुपया न पटा सकने की स्थिति में तुम्हें राज्य की कचहरी में उपस्थित होना पड़ेगा। जो उचित न्याय होगा, वह किया जाएगा।

दुनिया-भर की बेईमानी करने वाले के मुंह से न्याय की बात सुनकर लालू मन-ही-मन हंसा। यह सब समय का फेर है। कभी नाव नदी पर, तो कभी नदी नाव पर। जो हो, दीवान जी के विदा होते ही लालू ने सोच लिया कि वह कुछ ही दिनों में अपना कारोबार उठा लेगा। जमींदारी का कर्ज भी चुका देगा, यद्यपि स्वर्गीय जमींदार साहब ने उसे कर्ज के रूप में वह राशि नहीं दी थी। इसके बाद जहां उसका मन होगा, चला जाएगा।

कारोबार अभी आधा ही सिमट पाया था कि एक शाम लालू क्या देखता है कि पंडित जी उसके दरवाजे पर मुस्कुराते हुए खड़े हैं। उनके साथ दो और छाया मूर्तियां हैं। लालू को फूलचंद और सुगंधी बाई को पहचानने में देर नहीं लगी।

एक बार तो लालू को लगा कि कहीं वह सपना तो नहीं देख रहा है? परंतु बात एकदम सच थी। उसके सामने अत्यंत दयनोय चेहरा लिए हुए फूलचंद और सुगंधीबाई ही खड़े थे।

लालू ने उन्हें आदरपूर्वक बिठाया। वह उनसे कुशल-क्षेम पूछे, उससे पहले ही पंडित जी ने मामला स्पष्ट कर दिया। कहने लगे—"भैया लालू, ईश्वर की लीला अपरम्पार होती है। उनको तिल को ताड़ और ताड़ को तिल बनाने में जरा भी देर नहीं लगती। आदमी मूरख है जो घमण्ड में फूला-फूला फिरता है। तुम्हारे रहते-रहते फूलचंद की जो बढ़ती हो सकती थी, वह हुई। उसके बाद तो मुसीबतें कभी कम ही नहीं हुईं। व्यापार में लगातार घाटा होता गया। देख-रेख के अभाव में घर की दुकान भी बैठने लगी। पति-पत्नी में रोज झगड़े होने लगे। मैंने इन्हें समझाया कि बुरे दिनों में हिम्मत से काम लेना चाहिए। भगवान सबको देखता है। तब कहीं जाकर ये माने। बाहर का व्यापार समेटकर घर की दुकान पर ही काम देखने लगे। गांव वालों के साथ भी इनके संबंधों में सुधार हुआ। कंजूसी का

स्वभाव भी इनका बदला। लेकिन भगवान को इनकी एक और परीक्षा लेनी थी सो वह भी पिछले दिनों पूरी हो गई। घर में आग लग गई। सब कुछ स्वाहा हो गया। फूलचंद तो मारे दुख के आत्महत्या कर लेना चाहता था लेकिन मेरे मना करने और समझाने-बुझाने से किसी तरह वह मान गया। मैंने जब यहां आने का प्रस्ताव रख तब भी ये लोग हिचक रहे थे। यूं समझो कि मैं इन दोनों को जबरदस्ती पकड़कर तुम्हारे पास लाया हूं। तुम्हारा कारबार बड़ा है। उसमें कहीं-न-कहीं फूलचंद के लिये भी गुंजाइश जरूर निकल जाएगी।"

लालू की आंखों में आंसू आ गये। बोला—"काश कि मैं आप लोगों की कोई मदद कर सकता। मैं स्वयं कारोबार समेटने में लगा हुआ हूं। मुझ पर राज्य का बहुत बड़ा कर्ज है। उसे शीघ्र ही अदा करना है। तब जाकर मुक्ति मिल सकेगी।"

"भैया, बड़े बोल न समझो तो ये मेरे कुछ गहने हैं। इन्हें बेचकर अपना कर्ज अदा कर दो। मगर कारोबार मत समेटो। मैं तुम्हारे पांव पड़ती हूं। आखिर इन गहनों की खरीदी में तुम्हारी मेहनत भी तो लगी हुई है! भगवान चाहेगा तो फिर कमा लेंगे। गहने फिर बन जाएंगे। अभी मुसीबत के दिनों में ये किसी काम आ जाएं तो इससे बढ़कर बात और क्या हो सकती है!" यह थी सुगंधी बाई।

फूलचंद ने कहा कि सारी मेहनत वह कर लेगा। लालू बैठा-बैठा हुक्म-भर देता रहे, यही बस है। पंडित जी ने भी बताया कि अब वे भी रतनपुर से ऊब गये हैं। वहां आजकल जुआ, शराब और लड़ाई-झगड़ों का जोर है। उनकी आत्मा वहां घुटने लगी थी। इसी से वे यही इरादा लेकर आये हैं कि शेष जीवन लालू के दरवाजे पर ही काट सकें।

लालू ने देखा कि सबमें संघर्ष करने की इच्छा है। फिर वही

क्यों भाग रहा है। उसे इरादा बदलना पड़ा। शीघ्र ही जमींदारी का कर्ज पटा दिया गया। फूलचंद की मेहनत और पंडित जी के आशीर्वाद से लालू का व्यापार फिर चल निकला।

लालू ने देखा कि फूलचंद और सुगंधी बाई के स्वभाव में अब काफी परिवर्तन आ गया है। फूलचंद से तो बातें कम हो पातीं क्योंकि रात-दिन कारोबार में ही लगा रहता था, अलबत्ता सुगंधी बाई उससे खूब-खूब बातें करती। लालू संकोच करता, क्योंकि एक समय वह उसकी मालकिन रह चुकी थी।

एक दिन सुगंधी बाई ने लालू से कह ही दिया—"भैया, पिछली बातें भूल जाओ। समझ लो कि पिछली सुगंधी मर गई। पंडित जी के आशीर्वाद से अब इस नई सुगंधी बाई का जन्म हुआ है।"

अचानक लालू के मन में पंडित जी की मूर्ति उभर आई। माधोपुर में वही एक ऐसे आदमी थे जिन्होंने उसके साथ आदमी जैसा व्यवहार किया था, वर्ना आज वह कहां होता, कौन जानता है। उन्होंने ही उसे फूलचंद के यहां रतनपुर पहुंचाया था। फिर उसके रतनपुर छोड़ देने के बाद पंडित जी खुद रतनपुर आकर रहने लगे थे। देवता आदमी हैं। हमेशा दूसरों की भलाई की ही चिंता करते हैं।

जो भी हो। पंडित जी के कारण अब लालू के घर में एक धार्मिक वातावरण बन गया था। सुगंधी बाई भी दान-धरम में लगी रहती थी। फूलचंद व्यापार में व्यस्त हो गया था। लालू के करने के लिए तो मानो कोई काम ही नहीं रह गया था।

सुगंधी बाई का मायका कंचनपुर से लगभग दस कोस के फासले पर था। वहां से भी लोग अक्सर आते-जाते थे। घर में आठों पहर चहल-पहल रहने लगी थी।

इस बीच सुगंधी बाई की छोटी बहन फूलमती आई, तो वह

कंचनपुर में काफी दिनों तक रह गई। बड़ी सुशील और मिठ-बोली थी। चेहरा-मोहरा भी साफ था। मां-बाप ने उसकी शादी का भार अब सुगंधी बाई पर ही छोड़ दिया था।

एक दिन सुगंधी बाई ने पंडित जी के कान में कहा—"लालू यदि फूलमती के साथ शादी करने के लिए तैयार हो जाए तो कैसा रहे?" बात पंडित जी को जंच गई। वे भी देख रहे थे कि लालू अपने छोटे-से जीवन में लगातार संघर्षों के कारण कुछ थक-सा गया है। उसकी जिन्दगी को फिर से सम्हालने के लिए जरूरी है कि उसकी शादी फूलमती जैसी सुंदर और कुलीन लड़की के साथ हो जाए।

अवसर निकालकर सुगंधी बाई कुछ दिनों के लिए अपने मायके चली गई। फूलचंद अक्सर बाहर रहता। पंडित जी पूजा-पाठ में लगे रहते। लालू और फूलमती के लिए एक-दूसरे के निकट आने का यह उचित समय था।

कोई बात जब बनने को होती है, तो सहज ही बन जाती है। सुगंधी बाई की खुशी का ठिकाना न रहा, जब उसने सुना कि लालू ने विवाह के लिए अपनी स्वीकृति दे दी है।

बड़ी धूमधाम से लालू की बारात निकली। इस शादी से कंचनपुर के लोगों को बड़ी प्रसन्नता हुई। लालू के सूने जीवन में तो भरपूर हरियाली फैल गई।

o o o o

शादी के बाद तो दिन ऐसे उड़ने लगे मानो उनके पंख निकल आये हों। फूलचंद ने लालू को कारोबार की तरफ से कुछ इतना बेफिकर कर दिया था कि अब उसका सारा समय ऐशो-आराम में ही बीतने लगा। सुगंधी बाई के कारण फूलमती भी घर के कामों से मुक्त थी। समय मजे से कट रहा था।

ससुराल वालों का आग्रह था कि लालू कुछ दिनों वहीं रहे।

अतएव लालू फूलमती को लेकर दानीपुर चला गया। उसके ससुर खेती-बारी करते थे। अच्छे किसान थे। मेहनत पर भरोसा रखते थे। कभी किसी की तीन-पांच में नहीं पड़ते थे।

कुछ दिनों के लिए आये हुए लालू को तीन महीने कैसे गुजर गये, इसका पता ही नहीं चला। कभी वह खेतों पर निकल पड़ता तो कभी बाग-बगीचों की सैर करता। फूलमती भी उसके साथ होती। समय बीतते देर ही न लगती।

कंचनपुर लौट आने के बाद भी लालू का मन सैर-सपाटे से नहीं भरा। वह फूलमती को लेकर पंडित जी के पास माधोपुर के लिये चल पड़ा। अपनी मातृभूमि के लिए भला किसमें प्रेम नहीं होता? वहां पहुंचकर वे सब पंडित जी के एक शिष्य के यहां ठहरे। पंडित जी ने उस शिष्य को कभी संस्कृत की शिक्षा दी थी।

माधोपुर में बहुत-से लोग लालू से मिलने आये। उनमें वे लोग भी थे जिन्होंने लालू को बरबाद करके भिखारी बना दिया था। लालू के मन में किसी के प्रति कोई दुर्भाव नहीं था। वह सबसे प्रेमपूर्वक मिला। लौटते समय उसने गांव में एक संस्कृत पाठशाला भी खुलवा दी।

माधोपुर से लौटते समय पंडित जी के आग्रह पर लालू रतनपुर में भी रुका। वहां लालू के बहुत-से मित्र थे। सबने मिलकर लालू का पंचायत की ओर से सम्मान किया। लालू ने वहां भी एक पुस्तकालय के लिये दान की घोषणा की। लालू को सबसे मिलकर बड़ी खुशी हुई।

अब कंचनपुर लौटकर लालू कारोबार में मन लगाने की कोशिश करने लगा। लेकिन उसका मन थोड़े दिनों में ऊब गया। इस बीच उसके हाथ से एक-दो गलत-सलत सौदे भी हो गये। फूलचंद को बुरा तो लगा मगर उसने लालू से यही कहा

कि वह अभी कुछ दिनों तक आराम ही करे। व्यापार तो अपनी जगह चल ही रहा है। किसी तरह की कोई कमी नहीं है। यदि कभी कोई ऐसी समस्या आई तो वह उससे जरूर पूछ लेगा।

किसी तरह एक साल बीत गया। लालू कारोबार से बिल्कुल अलग रहा। व्यापार पर फूलचंद की पकड़ बढ़ती गई। व्यापार में लाभ भी खूब होने लगा। लाभ में लोभ बढ़ता है। यद्यपि लालू कभी कोई रोक-टोक नहीं करता था। फिर भी फूलचंद और सुगंधी छुप-छुपकर रुपये जोड़ने लगे।

लालू के खर्च के लिए एक निश्चित राशि तय कर दी गई। मगर लालू तो दिलेर तबीयत का आदमी था। मौका पड़ते ही वह किसी की मदद कर देता। कभी किसी को दान दे देता। शुरू-शुरू में तो लालू को कोई तकलीफ नहीं हुई मगर बाद में उसे आर्थिक कष्ट होने लगा। इसी कारण उसे समय-समय पर दुकान से अतिरिक्त राशि उठानी पड़ती थी।

इसी बात पर सुगंधी ने एक बार फूलमती से अपनी नाराजगी जाहिर की। कहा—"इस तरह पैसे उड़ाना ठीक नहीं। पैसे मेहनत से कमाये जाते हैं। अपने आदमी को समझाओ।"

फूलमती ने यह बात लालू से कही। यह भी कहा कि कारोबार से एकदम विरत रहना ठीक नहीं। दिन-भर घर में पड़े रहने से आखिर क्या फायदा ? लेकिन लालू ने हंसकर यह बात टाल दी। जिन्दगी फिर उसी बेढंगी रफ्तार से चलने लगी। व्यापार के प्रति लालू की विमुखता फूलचंद और सुगंधी बाई को सुख देती। रुपये-पैसे का लालच अक्सर आदमी के रिश्तों को बिगाड़ देता है। अब तक फूलचंद के कोई संतान न थी। फिर

भी उसे धन का मोह था। फूलमती, सुगंधीबाई की छोटी बहन थी। उसी ने लालू से उसका ब्याह कराया था। किंतु फूलमती को अब वह एक निठल्ले की पत्नी से अधिक नहीं मानती थी।

अपनी बड़ी बहन के रुख से फूलमती को कभी-कभी दुख तो होता था, मगर वह कर ही क्या सकती थी। जब कभी वह लालू से कहती, वह उसकी बात को मजाक में टाल जाता। फूलमती अब मां बनने जा रही थी। भविष्य की चिंता उसे सताने लगी थी। परंतु लालू था कि उसे अपने-आप में मस्त रहने के सिवा और कुछ काम नहीं था।

कंचनपुर में इधर एक औघड़ बाबा आ निकले थे। उनके साथ अनेक प्रकार के चमत्कार जुड़े हुए थे। बात की बात में कंचनपुर की प्रजा उनकी भक्त हो गई। सुना गया कि उनकी कृपा से गूंगा व्यक्ति बोलने लगता है। बहरा आदमी सुनने लगता है। तंत्र और मंत्र विद्या के बल पर वे रास्ते के भिखारी को भी राजा बना देते हैं। उन दिनों औघड़ बाबा छोटे-बड़े सबके बीच चर्चा का केन्द्र बने हुए थे।

बात लालू के कान तक पहुंची। विचार हुआ कि औघड़ बाबा से मिला जाए। लालू वैसे भाग्यवादी तो नहीं था, फिर भी बैठे-ठाले उसकी इच्छा हुई कि बाबा से भेंट करने में कोई हर्ज नहीं है। बाबा से कब मिला जाए, लालू अभी सोच ही रहा था कि औघड़ बाबा खुद चलकर उससे मिलने आ पहुंचे, बोले—"हम जान गये थे बच्चा, कि तुम बाबा से मिलना चाहते हो।"

बाबा की बात सुनकर तो लालू दंग रह गया। इसका मतलब यह हुआ कि बाबा अन्तर्मन की बातें भी जान लेते हैं। उसने

उन्हें मान-सम्मान के साथ बिठाया। हाल-चाल पूछे। भोजन के लिये आग्रह किया। बाबा तो भोजन में सिर्फ गुड़ और दही भर लिया करते थे। झटपट उत्तम गुड़ और दही का प्रबंध किया गया। इस प्रकार कुछ दिनों के लिये बाबा लालू के अतिथि बनकर रह गये।

बाबा के साथ उठने-बैठनेसे लालू को मानसिक रूप से बहुत लाभ हुआ। बाबा ने बताया कि दुनिया में ऐसा कोई काम नहीं जिसे आदमी नहीं कर सकता। हिन्दुस्तान में हमेशा विद्याएं फूलती-फलती रही हैं। बड़े-बड़े आविष्कार होते रहे हैं। मंत्र और तंत्र में बड़ी शक्ति होती है। आदमी यदि इन्हें साध ले तो फिर उसे किसी बात की कोई कमी नहीं रह जाती।

बाबा योग-विद्या के भी जानकार थ। उन्होंने लालू को कई प्रकार के आसन सिखला दिये। लालू के घर एक प्रकार से अब अखाड़ा ही लगने लगा। बाबा से मिलने-जुलने वालों की भीड़ लगी रहती। लालू ने एक बार फूलचंद को भी बुलवाया था, परंतु काम अधिक होने का बहाना करके वह आया नहीं।

औघड़ बाबा, सुगंधी के लिये अब सिर दर्द बन गये। खुलकर वह किसी से कुछ कह भी नहीं सकती थी। फूलचंद भी जल्दी में रिश्ते बिगाड़ने के पक्ष में नहीं था। सुगंधी बाई खुद ही अपने-आप में जल-भुनकर रह जाती थी।

बाबा के कारण लालू का खर्च अब बढ़ गया था। बाबा ने उसे एक योगाश्रम खोलने का सुझाव दिया। लालू को यह बात पसंद आ गई। उसने दुकान से एक मोटी रकम देने के लिये कहा। पहली बार लालू की इस मांग पर फूलचंद ने रोक लगा दी। लालू को अब जाकर होश आया कि वह कहां है। उसकी हैसियत क्या है। वह दुकान पर जा पहुंचा। रुपये न देने का

कारण पूछा। फूलचंद ने जवाब दिया कि पिछले एक वर्ष में उसने काफी रुपये उठा लिये हैं। इधर व्यापार भी कुछ मंदा चल रहा है, इसलिए अनावश्यक खर्च पर मैंने रोक लगा दी है।

लालू ने जरा रोष में कहा—"लेकिन यह अनावश्यक खर्च तो नहीं है? योगाश्रम खुलने से नगर के अनेक लोगों को इससे फायदा होगा। आखिर हमारा व्यापार उन्हीं लोगों के बल पर तो चल रहा है। उनसे लाभ के रूप में मिले पैसों को यदि कुछ मात्रा में हम उनके ही फायदे के लिए लगा देते हैं तो इसमें नुकसान ही क्या है?"

फूलचंद ने टका-सा जवाब दे दिया—"व्यापार में यह सब नहीं चलता। प्रजा की भलाई की फिकर जमींदार की है। हमारी नहीं। हम तो व्यापारी हैं। रात-दिन खून-पसीना एक करते हैं तब जाकर दो पैसे कमाते हैं। तुम्हें यदि इसी तरह अनाप-शनाप खर्च करना ही है तो कल से अपना कारोबार अलग कर दो।"

लालू के स्वाभिमान पर यह एक जबरदस्त चोट थी। लेकिन वह आपस के इस झगड़े को सबकी जानकारी में फिलहाल नहीं लाना चाहता था, इसलिये मन मसोसकर रह गया। लेकिन आश्रम तो खुलकर ही रहेगा, यह उसकी टेक थी।

रात को लालू ने फूलमती से सलाह की। फूलमती ने बताया कि वह तो उनसे कब से कहती आ रही है कि अपना कारोबार देखा करो, लेकिन उसकी बात सुनता ही कौन है, आज नतीजा सामने है। अंत में उसने यही कहा कि जितनी जल्दी हो सके अपना हिसाब-किताब अलग कर लो और कारोबार सम्हालो।

फूलचंद ने पहले से ही चालाकी कर रखी थी। सारा नकली हिसाब तैयार था। लाभ बहुत कम दिखाया गया था। व्यापार के दो हिस्से हो गये। लालू को नगद रुपये बहुत कम मिले। आश्रम बनवाने की उसकी टेक थी। उसने वह रकम आश्रम के लिए समर्पित कर दी।

आश्रम तो किसी तरह खुल गया। लेकिन लालू के बुरे दिन आ गये। व्यापार से उसका मन हट चुका था। उसके हिस्से में जो नौकर आये थे वे सब फूलचंद के रखे हुए और बेईमान थे। लालू की उदासीनता का वे लाभ उठाते थे। लालू का घर-खर्च भी बड़ी मुश्किल से निकल पाता था। बढ़े हुए खर्च को तत्काल रोक पाना भी एक कठिन काम था।

फूलमती की तो बस एक ही जिद थी कि लालू कारोबार में मन लगाये। मेहनत से हर बिगड़ा काम बन जाता है। दूसरों के भरोसे कभी किसी का भला नहीं होता। ठोकर खाकर ही आदमी सम्हलता है।

बातचीत के सिलसिले में औघड़ बाबा ने एक दिन यह भी बताया कि आदमी चाहे तो कोयले से भी हीरा बना सकता है। लालू तो यह सुनकर भौंचक्का रह गया। कोयले से हीरा बनाने की बात तो कोई सपने में भी नहीं सोच सकता। लेकिन जब औघड़ बाबा कहते हैं तो उन पर अविश्वास भला कैसे किया जा सकता है।

योगाश्रम भवन तैयार हो गया। नगर के युवक वहां आने लगे। लालू की आर्थिक स्थिति दिन-ब-दिन बिगड़ती ही गई। एक दिन उसने बाबा से गंभीरतापूर्वक यह पूछा कि यदि वे सारी विधियां बतलाएं तो वह कोयले से हीरे बनाने का काम शुरू कर देगा।

बाबा ने कहा—"उसकी विधियां तो सरल है किंतु सामान जुटाने में कठिनाइयां होंगी। कुछ रसायन तो बहुत मंहगे पड़ेंगे। फिर महीनों उसके मिश्रण की प्रक्रिया चलेगी। काफी धैर्य का काम है।

लालू ने बीड़ा उठा लिया। अब वह हीरे ही बनाएगा। चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाए। फूलमती ने उसे इस काम से रोकना चाहा, मगर लालू को उसकी जिद से रोक पाना मुश्किल था।

प्रारंभ में औघड़ बाबा लालू की मदद करते रहे। फिर यात्रा पर निकल पड़े। वादा किया कि साल-छह महीने में वे फिर लौट आएंगे। मगर वे लौटे नहीं। लालू बाबा की बताई विधि के अनुसार सामग्री जुटाकर उन्हें कूटता-छानता और गरम करता रहा। इस कार्यवाही में लालू का एक-एक पैसा निकल गया। फूलमती के गहने भी बिक गये।

कई बार ऐसा भी होता कि घर में खाने के लिए अनाज तक न होता। फूलमती को भूखा ही सो जाना पड़ता। उसका बच्चा दूध के लिए तड़पकर रह जाता। लेकिन लालू को हीरे बनाने से कभी फुरसत ही न मिलती कि वह इन दोनों के बारे में कभी सोच सके।

फूलचंद और सुगंधी बाई से अब उन लोगों की बोल-चाल भी बंद हो चुकी थी। वहां से कुछ पाने की आशा फूलमती कभी नहीं रखती थी। हां, वह अपने पिता से कुछ पा सकती थी, मगर वहां भी उसका स्वाभिमान आड़े आता था। कुल मिलाकर वह एक दुःखद स्थिति में फंस गई थी।

आखिर एक दिन जब फूलमती से बच्चे का तड़पना न देखा गया तो उसने अपने पिता को एक पत्र लिखा जिसमें लालू के

हीरे बनाने के पागलपन और घर की बरबादी का पूरा-पूरा वर्णन था। पत्र पढ़कर उसके पिता सारी स्थितियां भांप गये। उन्होंने अपने जवाब में लिखा कि चिंता की कोई बात नहीं है। वह अपने पति को लेकर अविलम्ब दानीपुर चली आए। वे सारे मामले को ठीक कर लेंगे।

उपयुक्त बहाना बनाने में फूलमती को थोड़ा समय लगा, अंत में उसे सफलता मिल गई। एक-दो दिन के लिए ही सही, लालू सपरिवार दानीपुर चलने के लिए तैयार हो गया।

दानी टोला पहुंचने पर लालू का बड़े उत्साह से स्वागत हुआ। किसी ने भी लालू के साथ ऐसा व्यवहार नहीं किया कि जिससे यह आभास हो कि लालू इन दिनों निठल्ला है या फिर उसका कारोबार नष्ट हो गया है। उसके ससुर जी ने कुशल-क्षेम पूछकर कहा कि वे अभी दो-तीन दिनों तक जमीन के एक मामले में उलझे हुए हैं। उसके बाद आराम से वे उससे हीरे बनाने के मामले पर बातें करेंगे।

ससुर जी के आश्वासन से लालू बहुत खुश हुआ। उसे अपना भविष्य शानदार दिखाई पड़ने लगा। उसे उम्मीद हो गई कि अब वह शीघ्र ही हीरे बना सकेगा। मालामाल हो जाएगा। फिर उसे रुपये-पैसों की कोई कमी न रहेगी।

फूलमती को उसके पिता ने चुपचाप यह समझा दिया कि उसे चिंता करने की कोई जरूरत नहीं है। लालू की समस्या को वे अच्छी तरह से समझ गये हैं। समय आते ही मामला ठीक हो जाएगा। सिर्फ धीरज धारण करना जरूरी है। हां, इस बीच लालू के साथ सबका व्यवहार अच्छा होना चाहिए।

लालू के ससुर को जमीन संबंधी कोई काम न था। उन्होंने सिर्फ बहाना ही किया था। इस अवधि के अन्दर दरअसल वे लालू की गतिविधियों की जांच-पड़ताल कर लेना चाहते थे। वे

मनोवैज्ञानिक ढंग से लालू का परीक्षण करते रहे। उन्होंने पाया कि लालू अचानक ही धनवान बनना चाहता है। उसमें धीरज भी है। लगन भी है। अपने पिछले जीवन में वह मेहनती भी रहा है। सारी स्थितियों को समझ लेने के बाद एक दिन उन्होंने लालू को एकांत में अपने पास बुलाया। बड़े प्रेम से बिठाकर उसने कहा—"आज मैं तुमसे हीरे बनाने के बारे में कुछ चर्चा करना चाहता हूं। पहले यह बताओ कि कोयले से हीरा बनाने की तुम्हारी विधि क्या है और तुम उस पर कितना काम कर चुके हो?"

लालू ने प्रसन्नतापूर्वक अपने ससुर को वह सब बता दिया, जो कुछ उसे औघड़ बाबा ने 'विधि' के नाम पर बताया था। साथ ही उसने अब तक जो कुछ किया था उसका स्पष्टीकरण भी दे दिया।

लालू की बात सुनकर उसके ससुर आश्वस्त हुए। कहा—"तुम्हारी विधि में एक चीज की कमी है। शायद औघड़ बाबा उसके बारे में तुम्हें बताना ही भूल गये। या फिर ऐसा भी हो सकता है कि जब वे लौटकर आएं तो तुम्हें बताएं। कभी-कभी गुरु लोग ऐसा भी करते हैं। कोई-न-कोई सूत्र अपने लिये बचाकर रख लेते हैं। मुझे लगता है कि औघड़ बाबा ने भी तुम्हारे साथ यही किया है। खैर, इसमें घबराने की कोई बात नहीं है। जिस चीज की कमी है वह मैं तुम्हें बता देता हूं। यद्यपि उस वस्तु को, उस मात्रा में जल्दी पा सकना टेढ़ी खीर है। तुम्हें धीरज रखना होगा। क्योंकि तुम एक महत्त्वपूर्ण काम करने जा रहे हो। जरा भी चूक हुई नहीं कि तुम्हारी सारी साधना पर पानी फिर सकता है।"

लालू की उत्सुकता बढ़ती जा रही थी। वह उस चीज का नाम जान लेना चाहता था जिससे कि वह शीघ्र ही कोयले से

हीरा बना सके। उसने अपने ससुर से शीघ्र उस वस्तु का नाम बताने के लिए कहा।

ससुर जी बोले—"कान खोलकर सुन लो। काम कठिन है। मेहनत और समय दोनों लगेंगे। इसलिए, यदि मैं जैसा कहूं, वैसा तुम करने को तैयार हो तो उस चीज का नाम मैं तुम्हें बता देता हूं।"

"मुझे मंजूर है," लालू ने कहा।

"ठीक है। अब जब तुम कोयले से हीरा बनाना ही चाहते हो तो जान लो कि उस काम के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण चीज है पपीते का लगभग एक पसेरी दूध। और यह दूध उन्हीं पेड़ों से प्राप्त किया जाए जो एक मंत्र विशेष द्वारा उगाये गए हों। मैं तुम्हें वह मंत्र सिखा सकता हूं।

लालू को सुनकर निराशा हुई। एक तो पपीते का दूध वह भी पसेरी-भर। और उसे भी मंत्र द्वारा उगाये गये पेड़ों से ही प्राप्त करना होगा। आखिर यह सब कब होगा? कब वह हीरे बना पाएगा?

ससुर जी लालू की परेशानी को भांप गये। बोले—"हताश होने की जरूरत नहीं है। धीरज से काम लोगे तो हर मुश्किल आसान हो जाएगी। तुम्हारी मदद के लिये मैं तैयार हूं।"

लालू ने कहा—"मेरे पास फिलहाल कुछ भी तो नहीं है। इस काम के लिये जमीन चाहिए। अच्छे बीज चाहिए। सिंचाई की व्यवस्था चाहिए। फिर उसकी देखभाल के लिये धन चाहिए।"

"वह सब मैं दूंगा। यदि तुम मेहनत करो।"

"मेहनत से मैं कभी नहीं भागता।"

"तो फिर कमर कसकर तैयार हो जाओ।"

"ठीक है, मैं तैयार हूं।"

"आज ही संध्या वह मंत्र मैं तुम्हें सिखा दूंगा। कल से अपना काम शुरू कर दो।"

दूसरे ही दिन से लालू पपीते की खेती में लग गया। फूलमती भी उसका साथ देने लगी। लालू के ससुर ने बड़ी मुश्किल से उसे एक मजदूर और रखने की इजाजत दी। वे चाहते तो एक साथ कई मजदूर दे सकते थे। लेकिन उन्होंने जान-बूझकर ही ऐसा किया था। दरअसल वे लालू से ही सारी मेहनत कराना चाहते थे।

लालू अब रात-दिन काम में लगा रहता। कुछ दिनों में पपीते के पेड़ बड़े हो गये। पति-पत्नी दोनों ही उस बगीचे को सम्हालते। सिंचाई करते और फल लगने की राह देखते। लालू मन-ही-मन हिसाब लगाता कि कितने पेड़ों से तो एकबारगी ही पसेरी भर दूध निकल आएगा। और तब शीघ्र ही उसकी हीरा बनाने की कल्पना साकार हो जाएगी।

देखते-ही-देखते पेड़ों पर फल आ गये। अच्छी फसल के आसार थे। नगर के व्यापारियों को जब पता चला तो वे दौड़े आये। उनमें से एक के साथ सौदा भी हो गया। पकते ही वह पपीतों की सारी फसल ले जाएगा।

लालू ने धीरे-धीरे अपना काम शुरू कर दिया। वह बूंद-बूंद पपीते का दूध इकट्ठा करने लगा। उधर पपीते के फल नगर के बाजारों में धड़ल्ले से बिक रहे थे। सारा हिसाब फूलमती के हाथ में था।

एक दिन ऐसा भी आया कि लालू पसेरी-भर दूध इकट्ठा करने में सफल हो गया। उसकी खुशी का ठिकाना न रहा। जब वह भागा-भागा अपने ससुर के पास पहुंचा तो उसने देखा

कि वहां पंडित जी मौजूद हैं। उसके बच्चे को अपनी गोद में बड़े प्रेम से खिला रहे हैं। फूलमती ढेर सारे रुपयों का हिसाब लगा रही है। कह रही है कि नगर का वह व्यापारी इस फसल के पूरे पैसे दे ही गया है, साथ-ही-साथ वह आने वाली फसल के नाम पर भी कुछ अग्रिम राशि जमा कर गया है।

अजीब-सा दृश्य था। पंडित जी बैठे मुस्कुरा रहे थे। लालू के ससुर अपनी मूछों पर ताव दे रहे थे। सामने चांदी के रुपयों का एक ढेर लगा हुआ था। उसका नन्हा बालक खिलवाड़ ही में उस ढेर में से रुपये निकालकर इधर-उधर फेंक रहा था, और लालू अपने हाथ में पसेरी भर पपीते का दूध लिये खड़ा था।

"आओ लालू भैया," पंडित जी बोले।

लालू काफी उत्साह में था। अभिवादन करके बैठ गया। तब उसके ससुर ने कहा—"तुम्हारे द्वारा हीरा बनाने में अभी देर लग सकती है। चाहो तो इन रुपयों से अभी इसी वक्त हीरे खरीदे जा सकते हैं। ये तुम्हारी अपनी मेहनत के पैसे हैं। इन्हें सम्हाल कर रख लो।

लालू कुछ समझे, कुछ कहे, इससे पहले ही पंडित जी कह उठे—"भैया बुजुर्गों की बातों में हमेशा कोई-न-कोई रहस्य होता है। तुम्हारे स्वर्गीय पिता ने अपने अंतिम दिनों में तुमसे किसी को सलाम न करने और शहद-रोटी खाने की बात कही थी। तुम उसका अर्थ ही न समझ पाये थे और धन-दौलत गंवा बैठे थे। आज एक और रहस्य तुम्हारे सामने आया है। कोयले से सचमुच के हीरे बनाने का काम तो कोई वैज्ञानिक ही कर सकता है। सामान्य आदमी के बस का यह रोग नहीं है। इसका सीधा-सादा मतलब यही है कि मेहनत करो और खुशी के हीरे

जमा करो। तुमने मेहनत की। उसका नतीजा आज तुम्हारे

सामने हैं।"

लालू ने एक पल फूलमती की तरफ देखा। उसका चेहरा प्रसन्नता से भरा हुआ था। क्षण-भर में ही लालू की समझ में सब कुछ आ गया। अब कोयले से हीरा बनाने की सनक उसके दिमाग से उतर गई थी। और मेहनत करके रोटी कमाने की तरफ उसका मन मुड़ चुका था।

□□